
चन्दामामा
माँ-बच्चों का मासिक पत्र
Feb.
50
8

अमूल्य वस्तु

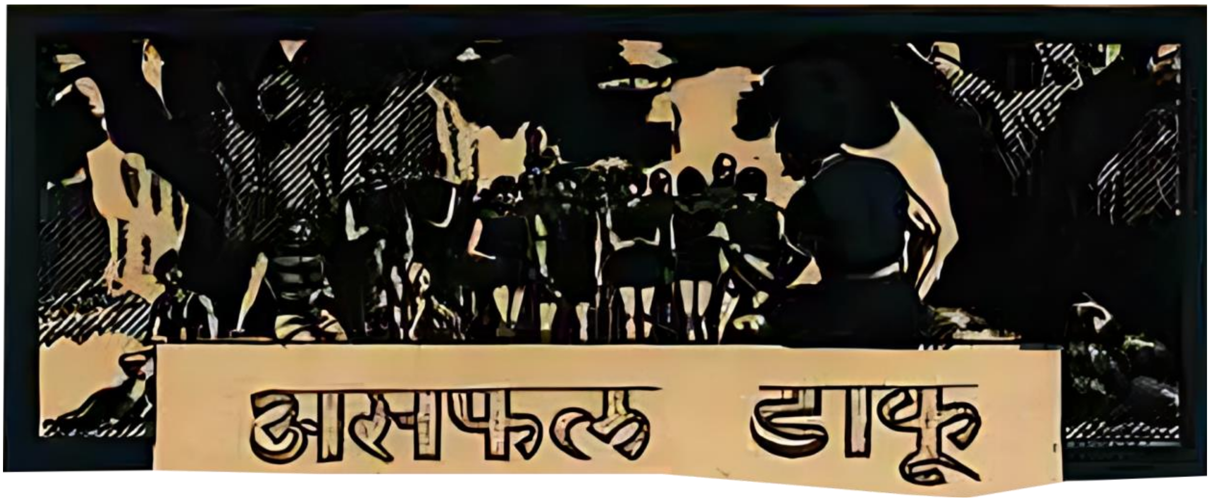
एक राजा के तीन लड़के थे- देव, शंख, और अमन्द। उस देश के सेनापति ने सैनिकों को घूस देकर अपनी ओर कर लिया और उनकी मदद से राजा को मरवा दिया.... और राजकुमारों को देश से निकाल दिया। तीनों राजकुमार एक बुढ़िया के घर ठहरे। वे आपस में यों बातें करने लगे। "सबसे अधिक मूल्यबाली चीज है, सम्पत्ति। यदि वह हो तो सब कुछ किया जा सकता है।" देव ने कहा। "नहीं, सेना, उसी की मदद पाकर ही तो सेनापति ने हमें देश से निकाल दिया।" शंख ने कहा।

"हम तीनों, तीन दिशाओं में निकलें। जो हम तीनों को मुख्य लगे उसे पाकर, हम दस वर्ष बाद यहीं मिलेंगे।" शंख ने कहा। अगले दिन देव पूर्व की ओर, और शंख पश्चिम की ओर निकले, अमन्द जो, उत्तर की ओर गया था, बापस लौट आया और बुढ़िया की लड़की से शादी करके वहीं रहने लगा।

दस वर्ष बीत गये। देव, पूर्व की ओर से सोना लेकर एक काफिले के साथ आया, पश्चिम से शंख सेना लेकर आया। "देखा। मैं अपने सोने से तुम्हारी सारी सेना खरीद सकता हूँ।" देव ने कहा। "असम्भव! मैंने शंख बजाया की नहीं, मेरी सेना तेरे काफिले का खातमा कर देगी।" शंख ने कहा। इतने में अमन्द घर में से निकला। "अरे, अभी आ गये- तुम कौन-सी अमूल्य वस्तु लाये हो?" दोनों भाइयों ने उससे पूछा।

"सन्तोष" अमन्द ने उनसे कहा।





कन्नोज के पासवाले जङ्गल में डाकुओं का एक गुट रहा करता था। वे कभी कभी शहर में आते, डकैतियों करते और रुपया पैसा ले जाकर जङ्गल में अपने रहने की जगह छुपा दिया करते। जब शहर में डाका डालने का मौका न मिलता तो वे गाँवों में उत्पात मचाते।

एक बार इन डाकुओं ने नगर में चोरी करने का निश्चय किया। डाका डालने से पहले वे शहर में, वेष बदलकर घूमे फिरे। उन्होंने मालूम किया कि किस घर में चोरी की जा सकती थी। उन्हें दो घर मिले। एक घर एक कञ्जूस का था। किसी को न मालूम था कि उसके घर में कितना धन था। वह हमेशा फटे-पुराने कपड़े पहनकर गरीब की तरह रहता। अगर दिन में कहीं घर से बाहर जाना होता तो घर में तीन तीन ताले लगाकर जाता। रात में अन्धेरा होने से पहले ही सब दरवाजे बन्द करके सो जाता। घर में उस कञ्जूस के साथ रहनेवाला भी कोई न था। और तो और एक नौकर तक भी न था। बड़ा कमीना था वह।

दूसरा घर एक ठाकुर का था। वह बहुत धनी था। घर में नौकर ही नौकर थे। उसे शिकार खेलने का शौक था। जिन्दे जङ्गली जानवरों को वह पिञ्जड़ों में भी रखता।

इन दोनों घरों को लूटने के लिए डाकू दो टोलियाँ बनाकर गये। उन डाकुओ ने, जो बड़ी बड़ी डकैतियों में भाग न ले पाते थे, अपना अलग गुट बनाकर, शहर के छोटे मोटे घरों में डाका डालने का निश्चय किया।

दो दिन उन्होंने तैयारी की, तीसरे दिन वे शहर गये।

छोटे मोटे घर लूटनेवाले गुट ने, एक छोटे दुमञ्ज़ले में रहनेवाली बुढ़िया को लूटने की ठानी। गली में दो चोर खड़े हो गये और तीसरा मकान में घुसा। बुढ़िया एक टूटी फूटी चारपाई पर खुर्राटे मारती सो रही थी। और चोर एक एक चीज़ लेकर मुण्डेर पर से गली की ओर फेंकने लगा। लगातार सब चीजों के फेंक देने के बाद डाकू ने बुढ़िया का बिस्तर भी लेना चाहा। इसलिये उसने बुढ़िया को चारपाई से नीचे उतार दिया। वह जल्दी जल्दी बिस्तर समेटने लगा। बुढ़िया ने उठकर कहा-"यह क्या कर रहे हो बेटा! मेरी सब चीजें उस रईस के आङ्गन में क्यों फेंक रहे हो?"

डाकू सोचने लगा कि क्या उसने बुढ़िया की चीजें गली में नहीं फेंकी थीं! उसे सन्देह हुआ। यह देखने के लिए कि चीजें उसके साथियों ने ली थीं कि नहीं वह मुण्डेर के पास गया। तुरन्त बुढ़िया ने उसके पैर पकड़कर उसको गली में फेंक दिया। गिरने पर उसके गले में चोट



लगी और वह वहीं ठण्डा हो गया। दोनों चोर डर के मारे भाग गये।

जो डाकू कञ्जूस का घर लूटने गये थे, वे उसके घर आधी रात के करीब पहुँचे। सारा घर किले की तरह था। बिना दरवाजा तोड़े अन्दर नहीं जाया जा सकता था।

"तोड़ने पर तो आवाज होगी। अड़ोस-पड़ोस के लोग उठकर हमारे काम में बाधा पहुँचायेंगे। इसलिये चाकू से छेद करना है, ताकि हाथ अन्दर जा सके, फिर चटखनी खोल दूँगा।" टोली के सरदार ने कहा।



पर जब वह किवाड़ में छेद कर रहा था तब कञ्जूस अन्दर जग गया। चोर अन्दर हाथ रखकर चटखनी पकड़नेवाला ही था कि कञ्जूस ने उसकी हथेली में एक कील गाड़ दी। उसका हाथ दरवाजे से जा चिपका।

इस बीच कञ्जूस खिड़की खोलकर चिल्लाया-"चोर चोर" वह जोर से चिल्लाया ताकि आसपास के लोग जान सकें। पड़ोसी, गँडासे, लाठी, कटार, लेकर कञ्जूस के घर भागे।

"भाइयो! हमें भागना होगा। मेरा हाथ अगर न काटा गया तो मैं आपके साथ न भाग सकूँगा। अगर मैं पकड़ा गया तो मेरी बोटी बोटी काटकर छोड़ेंगे। इसलिये मेरा हाथ काट दो।" सरदार ने अपने साथियों से कहा।

उन्होंने वैसे ही किया। उसके टुण्डे हाथ पर जितने कपड़े मिले, उतने बाँध दिये ताकि खून न गिरे और भागने का रास्ता न मालूम हो जाये। परन्तु नगर के लोग उनका पीछा करने लगे।

टुण्डा ड़ाकू और साथियों के साथ न भाग सका। उसने चाकू से आत्म हत्या कर ली। बाकी जैसे तैसे जान बचाकर अपनी जगह पहुँचे।

जो ठाकुर का घर लूटने गये थे, उन्हें बहुत कोशिश करनी पड़ी। अपनी कोशिश कामयाब करने के लिए, उन्होंने कुछ भी अछूता न छोड़ा। उन्होंने जङ्गल में पकड़े एक भालू का चमड़ा निकाला। उसे सुखाकर उसमें एक अपने बहादुर साथी को सी दिया। जिस दिन डाका डालना था उसी दिन शाम को दो डाकू शिकारी का वेष बदलकर, अपने साथी को एक पिञ्जड़े में रखकर ठाकुर के पास गये। उन्होंने उससे कहा- "हम यह भालू आपके लिए

उपहार में लाये हैं। स्वीकार कीजिये।" ठाकुर ने उनकी बातों पर विश्वास करके अपने नौकरों से कहा-"अरे! इसे हमारे भालुओं के साथ रखो।"

चोर घबराये। उन्होंने कहा-"हुजूर कुछ दिन पहले यह बीमार था। अभी अभी ठीक होने लगा है। इसलिये इसको ऐसी जगह रखिये जहाँ दक्षिणी हवा आती हो।" ठाकुर इसके लिये भी मान गया। उसने उन्हें इनाम देकर भेज दिया।

उस दिन रात को जब सब सो गये थे, भालू का चमड़ा पहने हुये चोर ने पिञ्जड़े से निकल कर ठाकुर के घर के किवाड़ खोल दिये। बाहर खड़े उसके साथी अन्दर आ गये।

"खजाना पश्चिम की ओर के कमरे में है। रोशनी करते समय एक मन चान्दी उस कमरे में रखी गई थी। कमरे की चाबी बड़े पहरेदार के पास है। वह वराण्डे में सो रहा है।" भालू वाले डाकू ने साथियों से कहा।

उसके साथियों ने बड़े पहरेदार को मार कर चाबियाँ ले लीं। उन्होंने खजाने की ओर जाते हुये, अपने भालू



बाले साथी से कहा-"तुम यहीं घूमते रहो। अगर कोई नौकर जगा भी तो तुम्हें देखकर डरकर अन्दर भाग जायेगा।" वह इधर उधर आङ्गन में घूमने लगा।

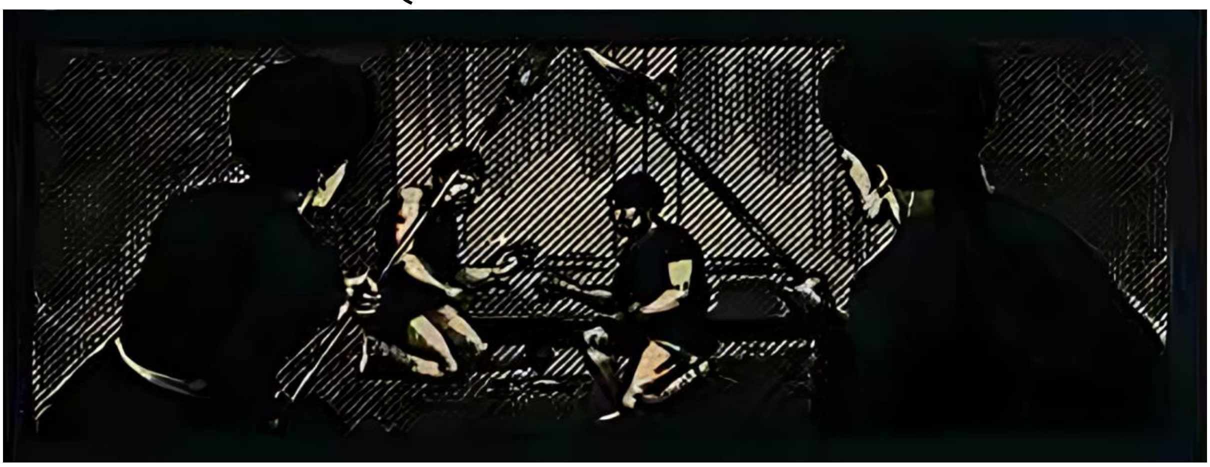
उन्होंने यह सोचकर गलती की थी कि ठाकुर के नौकर भालू को देखकर डर जायेंगे। जङ्गली जानवरों के तो वे भली-भाँति आदी थे।

डाकुओं के खजाना में चले जाने के बाद एक नौकर आङ्गन में आया। उसे वह भालू बाहर घूमता दिखाई दिया, जिसको पिञ्जड़े में होना चाहिये था। तुरन्त उसने दूसरों को भी पुकारा। नौकरों ने भाले, तलवार, मशाल लेकर भालूवाले चोर को चारों ओर से घेर लिया। इस बीच किसी ने शिकारी कुत्ते खोल दिये। वे भालूवाले चोर को खींचने लगे। चोर ने बाहर भागने की सोची। पर नौकरों ने दरवाजे बन्द कर दिये। भालूवाला चोर, अपनी प्राण रक्षा के लिए नाखूनों से कुत्तों को खरोंचने लगा। तुरन्त एक नौकर ने उसके पेट में भाला भोंक दिया।

भालूवाले डाकू के पास जाकर नौकरों ने देखा तो वह भालू, न था आदमी था। वह जरूर चोर होगा। उसको जिन्होंने उपहार में दिया था वे भी चोर ही होंगे। इसी चोर ने पिञ्जड़े से से निकलकर, अपने साथियों को अन्दर आने दिया होगा।

इन सब बातों के सूझते ही नौकर स्वाजाने की ओर भागे। वहाँ उन्होंने बाकी डाकू देखे।

इस प्रकार उस दिन के उनके सब डाके असफल रहे।





[७]

[चन्द्रवर्मा नदी में बहता बहता एक जङ्गल के किनारे लगा। वह कुछ दूर घने जङ्गल में गया था कि पेड़ों का कहना, चिल्लाना उसे सुनाई दिया। इतने में उसके सामने तीन सिरोबाला एक साँप आया। उसके पीछे पीछे चलता, चन्द्रवर्मा एक जादूगरनी के घर में पहुँचा। जादूगरनी ने उसकी अगवानी की, उसने उसे काँच के गोल में बीरपुर नगर की स्थिति, सेनापति धीरमल्ल के घेरे जाने का दृश्य दिखाया। उसके बाद :-]

चन्द्रवर्मा के कन्धे पर हाथ रखकर कपालिनी ने कहा-"बेटा, घबराओ मत। कष्ट हमेशा नहीं रहते। तुम फिर कभी अपना राज्य जीत सकते हो। निराश मत हो। अगर तुमने अपना वचन निभाया, तो उसके बाद में अवश्य तुम्हारी हर तरह से मदद करूँगी।"

कपालिनी की बातों से चन्द्रवर्मा का हौसला बिल्कुल न बढ़ा। सौ योजन दूर शंख नाम के मान्त्रिक के जादूवाले घर में घुसकर उसे कोई चीज़ लानी होगी। अगर वहाँ से वह जिन्दा वापस आ सका, तभी कपालिनी उसकी मदद कर सकती थी। अगर कहीं मर गया तो......... "

कपालिनी ने इस तरह निश्वास छोड़ा, जैसे वह जान गई हो कि चन्द्रवर्मा क्या चिन्ता कर रहा था। उसने मुस्कराते हुए



कहा-"बेटा वर्मा, मैं जान गई हूँ कि तुम क्या सोच रहे हो। अगर तुम अभी यहाँ से जाना चाहो तो जा सकते हो। मुझे कोई एतराज नहीं है। न काल नाग, न जङ्गल के पेड़ ही तुम्हारा कुछ बिगाड़ेंगे। यह मैं तुम्हें विश्वास दिलाती हूँ। ठीक है न?"

जब चन्द्रवर्मा ने यह सुना कि वह वहाँ से जा सकता था, तो वह चिन्तित हो गया। अगर वह जाना भी चाहता, तो भी ऐसी कोई जगह न थी, जहाँ वह जा सकता था। वह जिस हालत में था, उसमें जङ्गलों में, पहाड़ों में अकेले घूमने के सिवाय वह कुछ न कर सकता था। पिता मर चुका था। राज्य शत्रुओं ने हथिया लिया था। विश्वासपात्र मित्र, सुबाहू का कहीं पता न था।

"कपालिनी! मैं तुम्हारी भरसक मदद करने की कोशिश करूँगा। शंख नामक मान्त्रिक के घर से मुझे कौन-सी चीज़ लानी है?" चन्द्रवर्मा ने पूछा।

कपालिनी का मुँह खिल-सा गया। वह गद्दे पर से उठी। हाथ में पकड़ी मनुष्य की हड्डी से, दीवार के पासवाले लकड़ी के खिलौने के सिर पर उसने जोर से मार कर कहा-"भैरव! तुरन्त हमारे अतिथि के लिए अच्छी अच्छी चीजें खाने के लिए लाओ। समझे?"

तुरन्त "हूँ....." करता, एक विशाल काय व्यक्ति वहाँ प्रत्यक्ष हुआ। उसकी आवाज से सारा घर गूँज उठा। "यह लो अच्छी चीजें!" उसने सोने के थाल में हर तरह की स्वादिष्ट चीजें, पकवान आदि, चन्द्रवर्मा के सामने रखे।

चन्द्रवर्मा को बड़ी जबर्दस्त भूख लगने लगी। जब तक वह भोजन करता रहा





तब एक तरफ कपालिनी और दूसरी तरफ भैरव खड़े रहे। पेट भर खाने के बाद, बाकी चीजों के साथ सोने के थाल को कुछ दूर हटाते ही, भैरव हाथ धोने के लिए पानी लाया।

"कपालिनी, जिसके हाथ में काल नाग, और भैरव जैसी भयङ्कर शक्तियाँ हैं; वह शंख के घर से, जो चीज़ चाहती है, स्वयं क्यों नहीं मँगा लेती? उनकी अपेक्षा मुझमें ऐसी कौन-सी अधिक शक्ति है? कहीं इसमें कोई धोखा तो नहीं है?" चन्द्रवर्मा सोचने लगा।

"बेटा, चन्द्रवर्मा, अब मुख्य विषय पर बात करें। शंख के जादू के घर में एक महान शक्तिवाला शंख है। एक जड़ी के कषाय को उसमें डालकर उसे पिया जाय तो बुढ़ापा जाता ही है, जवानी भी वापस आ जाती है। हज़ार वर्ष तक बुढ़ापा पीनेवाले के पास आने का नाम नहीं लेता। एक हजार पचास वर्ष पहले मैंने वह चिकित्सा पाई थी। तब मान्त्रिक शंख मेरा शत्रु न था। उसके बाद वह मेरा बड़ा दुश्मन हो गया।" कहते कहते कपालिनी ने पीछे मुड़कर देखा। कुछ दूरी पर खड़े भैरव को अपनी ओर ताकते हुए देख उसने कहा-"नीच कहीं का! तूने अपनी मनहूस आदत न छोड़ी।" फिर उसने मनुष्य की हड्डी उसके सिर पर जोर से मारी। तुरन्त भैरव जोर से कराहता-कराहता फिर लकड़ी का खिलौना हो गया और तरक्षण दीवार के पास जा खड़ा हुआ।

"वह तो तुम्हारा सेवक है। क्यों उसको इतनी जोर से मारती हो?" चन्द्रवर्मा ने पूछा।

कपालिनी ने जोर से हँसकर कहा-"वह मेरा सेवक अवश्य है, पर मौका

मिलने पर मेरा भेद जानकर मुझे छोड़कर वह शंख के पास जाने में नहीं हिचकेगा। वह इतना नीच है। इन तुच्छ भूतों से यही तो झञ्झट है। अगर उनको कोई अपने मालिक से अधिक शक्तिशाली मिलता है तो उसके पास जाने की कोशिश करते हैं। इसीलिए मैं उसे लकड़ी का खिलौना बनाकर वहाँ फेंक देती हूँ। शंख ने मेरे भेद पाने के लिए बहुत से लोगों को भेजा। उनकी बुरी हालत तो तुमने देखी ही है।" कहते हुए उसने दरवाजे पर लटके कपालों के तोरण को, चन्द्रवर्मा को दिखाया।

कपाल के तोरण को देखकर, चन्द्रवर्मा को काठ मार गया। तब तक उसने उनकी ओर ध्यान से नहीं देखा था। शंख द्वारा भेजे गये दूत मार दिये गये थे, और उनके कपालों से वह तोरण बनाया गया था। उसी तरह कपालिनी द्वारा भेजे गये दूत मरने के बाद शंख के गले में माला के रूप मैं लटक रहे होंगे।

"कपालिनी, शंख के पास जो तुमने दूत भेजे होंगे, उनकी हालत भी तो यही हुई होगी।" चन्द्रवर्मा ने सन्देह करते हुए पूछा।



कपालिनी ने सिर इस तरह हिलाया, जैसे न कह रही हो। उसने कहा- "मैंने उसके पास अभी तक किसी को नहीं भेजा है। उस शक्तिशाली शंख को कौन चुराकर ला सकता है, यह में जानती हूँ।"

"वह मैं ही हूँ यही तो तुम्हारा ख्याल है?" चन्द्रवर्मा ने पूछा।

"हाँ वर्मा" कपालिनी ने खुश होकर कहा। "तुम नौजवान हो। यही नहीं, क्षत्रिय हो। और अपने बन्धु, मित्र, राज्य, सभी कुछ खोये बैठे हो। तुमसे अधिक



साहसी मुझे कहाँ मिलेगा? इस प्रयत्न में यदि तुम सफल हुए तो तुम राजा ही न रहोगे, बल्कि सम्राट बन जाओगे। यह कैसे बन सकोगे उस शंख के मेरे पास आने के बाद, मैं बताऊँगी।" कपालिनी ने कहा।

कपालिनी की बातें सुनकर चन्द्रवर्मा का हौसला बढ़ा। परन्तु ऐसी बात न थी कि उसके दिल में सन्देह ही न रहा हो। हो सकता है कि जैसे भी हो उससे शंख लिवा लाने के लिए, वह जादूगरनी सरसब्ज बाग दिखा रही हो।

"अच्छा, यह बताओ, मान्त्रिक के घर जाने का कौन-सा रास्ता है। मैं अभी जाता हूँ।" चन्द्रवर्मा ने कहा। उसमें न जाने कहाँ से उत्साह आ गया।

कपालिनी ने घर से बाहर रास्ता दिखाया। उसके पीछे पीछे चन्द्रवर्मा गया। सूर्य पश्चिम की ओर जा रहा था। कपालिनी ने उत्तर दिशा की ओर दिखाते हुए कहा- "इस दिशा की ओर सौ योजन जाने के बाद, वह पहाड़ है, जिस पर शंख रहता है, उसका घर है। उस घर के पूजा के कमरे में, वह शक्तिशाली शंख, एक साँप के गले में लटक रहा होगा। वह साँप, दीवार के एक खूँटे से लटक रहा होगा। तुम मान्त्रिक शंख से दोस्ती करके, नहीं तो धोखा देकर, नहीं तो उसको मारकर, उस शंख को जैसे तैसे जरूर लाओ।"

"क्या उतने बड़े मान्त्रिक को मारना भी सम्भव है?" चन्द्रवर्मा ने आश्चर्य से पूछा।

"क्यों नहीं? चाहे कोई कितना बड़ा मान्त्रिक ही न हो, किसी न किसी दिन उसको मरना ही पड़ता है। शंख इसका

अपवाद नहीं है। उसको किस तरह मारा जा सकता है, यह तुम्हें ही कोशिश करके मालूम करना होगा।" कपालिनी ने कहा।

"अच्छा, तो मैं चलता हूँ।" कहकर अपनी तलवार की ओर एक बार देखकर चन्द्रवर्मा आगे बढ़ा।

चन्द्रवर्मा अभी दो तीन कदम आगे गया ही था कि कपालिनी भागी भागी पीछे से आई। उसके कन्धे पर हाथ रखकर उसने कहा-"बेटा वर्मा, एक मुख्य बात तो मैं भूल ही गई। शंख के पास एक आश्चर्यजनक पक्षी है। उसके बल और तेजी के बारे में कुछ नहीं कहा जा सकता। उसका नाम अग्नि पक्षी है। वह हर रोज़ शाम को आहार की खोज के लिए निकल पड़ता है और आधी रात के समय वापस आता है। जब वह आकाश में उड़ता है, तो आग की लपटें निकलती हैं। उनकी रोशनी में बिना भटके तुम मान्त्रिक के घर पहुँच सकते हो। तुम्हें कुल दो सौ योजन आना जाना होगा। तुम्हारा क्या ख़याल है कि कितने दिनों में यह काम कर सकोगे?"



कपालिनी के इस प्रश्न से चन्द्रवर्मा को अचरज हुआ। जङ्गलों में, पहाड़ों पर, ऊबड़-खाबड़ रास्तों पर सौ योजन चलना होगा। उसके बाद बलशाली शंख को वश में करके उसके शंख को लेना होगा। वापस फिर सौ योजन चलना होगा। भगवान ही जानते हैं कि रास्ते में कितनी मुसीबतें झेलनी होंगी। उस हालत में कैसे यह कहा जा सकता है कि मैं कब तक वापस आ सकूँगा।

चन्द्रवर्मा की चिन्ता कपालिनी भी ताड़ गई। उसने कहा- "हाँ, ऐसी बात

नहीं है कि मैं तुम्हारे साहस के बारे में नहीं जानती हूँ। परन्तु अगर एक वर्ष में तुम शंख न ला सके तो उससे मेरा कोई उपयोग न होगा। अगर एक रोज़ भी अधिक हो गया तो वह मेरे लिए बेकार है। अगर तुम किसी कारणवश इस समय में वापस न आ सके तो मैं यहाँ न रहूँगी। परन्तु मैंने जो तुम्हें सहायता देने का वचन दिया है, उसे न भूलूँगी। काँच के गोलेवाले मेज की दराज में एक ताड़ का पत्र रखती जाऊँगी। उसमें यह लिखती जाऊँगी कि उस शंख का कैसे अपने हित के लिए तुम उपयोग कर सकते हो।" कपालिनी ने कहा।

कपालिनी के इन बातों पर चन्द्रवर्मा को पूरा विश्वास हो गया। वह यह जान गया कि वह जादूगरनी उसे धोखा नहीं दे रही थी। चन्द्रवर्मा ने उसके दोनों हाथ पकड़ कर प्रेम से कहा-"एक साल में मैं उस शंख को लेकर वापस आ जाऊँगा। तुम घबराना मत। बेफिक्र रहो।" कहता उसके हाथ छोड़कर आगे चला।

तुरन्त कपालिनी ने "काल नाग" (तीन सिरवाले साँप) को बुलाया। साँप फुँफकारता उसके पास आया। कपालिनी ने चन्द्रवर्मा को दिखाकर कहा-"उसके साथ जाओ, जङ्गल पार करने तक उसकी रक्षा करो।"

काल सर्प एक छलाङ्ग में चन्द्रवर्मा के आगे पहुँचा और उसे रास्ता दिखाने लगा। पेड़ों में कुछ दूर जाने के बाद चन्द्रवर्मा ने पीछे मुड़कर देखा। उसे कपालिनी न दिखाई दी। पर जहाँ घर होना चाहिए था, वहाँ गिद्ध पंख और शेर के आकार में एक विकृत रूप दिखाई दिया।

(अभी और है)



दुष्ट से दोस्ती

जङ्गल में, एक पेड़ पर एक बगुला और एक कौआ रहा करते थे। कौआ बड़ा खराब था। फिर भी बगुले ने सोचा-"अगर हम अच्छे हो, तो दूसरों की बुराई हमारा क्या बिगाड़ेगी?" और वह उसके साथ रहने लगा।

एक बार एक राहगीर उस तरफ से गुज़रा। गरमी अधिक थी। इसलिए वह उस पेड़ की साया में सो गया। थोड़ी देर बाद उस राहगीर पर धूप आई। यह देख बगुले ने अपने पंख फैलाकर उसके मुँह पर छाया की।

बगुले को यह करता देख कौआ हँसा और राहगीर पर एक पत्थर फेंककर वह पेड़ पर से भाग गया। पत्थर लगते ही राहगीर दर्द के नारे उठा। उसे पेड़ पर बगुला दिखाई दिया। उसने सोचा कि उसीने उस पर पत्थर फेंका होगा। उसने उस पर जोर से पत्थर मारा। पत्थर लगते ही बगुला नीचे गिरा और मर गया।





वेनिस नगर में शैलोक नाम का एक यहूदी रहा करता था। वह सूद का व्यापार किया करता था। इसाई व्यापारियों को कर्ज देकर उसने सूद के रूप में बहुत-सा पैसा कमाया। क्यों कि सूद वसूल करने में, वह किसी प्रकार की दया-दाक्षिण्य न दिखाता था, इसलिए उससे लोग चिढ़े रहते। शैलोक के शत्रु ही शत्रु थे। कोई मित्र न था।

वेनिस नगर में ही, अन्टोनियो नाम का एक व्यापारी रहा करता था, यह शैलोक का जानी दुश्मन था। वह शैलोक के लिए बगल में काँटा-सा था। वह युवक था। सहृदय था। स्नेह-पात्र था। जो कोई मुसीबत में होता, उसको बिना सूद के ही वह पैसा देता। जब व्यापारियों के समूह में ये दोनों मिलते तो अन्टोनियो, शैलोक की पोल खोला करता। अन्टोनियो से बदला लेने के लिए, शैलोक बहुत दिनों से मौके की प्रतीक्षा कर रहा था।

वेनिस नगरवासियों को जितनी घृणा शैलोक से थी उतना ही प्रेम अन्टोनियो से था। उसके बहुत से मित्र थे। उन सब में सबसे अधिक विश्वासपात्र बसोनियो नाम का नौजवान था। वह बड़े खानदान का था। उसके पिता ने उसको बहुत कम सम्पत्ति दी थी। उसको भी उसने जल्दी खर्च कर दिया। उसके पास यद्यपि धन न रह गया था पर पुरानी आदतें वह छोड़ न पाता था। सम्पत्ति के खतम हो जाने के बाद, बसोनियो कुछ दिनों तक अन्टोनियो की मदद पर ही जीता रहा।

परन्तु, बसोनियो के गरीबी के दिन लदनेवाले थे क्योंकि उसने एक अमीर

घर की लड़की से प्रेम किया और उससे विवाह करने को भी उसे अवकाश मिला। उस लड़की का नाम पोशिया था। उसके पिता ने मरते समय सारी जमीन जायदाद अपनी लड़की के नाम लिख दी थी। वह वेनिस नगर के समीप बेल्मोन्ट गाँव में रह रही थी।

पोशिया का पिता जब जीवित था तभी बसोनिया अक्सर बेल्मोन्ट आया जाया करता। बसोनियों को विश्वास था कि पोशिया उससे प्रेम कर रही थी। पिता की मृत्यु के कारण उसको शादी करनी पड़ती। इसलिये उससे विवाह के बारे में कहने के लिए बसोनियो ने बेल्मोन्ट जाने का निश्चय किया।

पर दुल्हा की तरह सजधज कर जाने के लिए बसोनियो के पास धन न था। इसलिये वह अपने दोस्त अन्टोनियो के पास गया। उसने उससे तीन हजार इयूकीट कर्ज माँगे। दुर्भाग्य से उस समय, अन्टोनियो के पास इतना धन न था। वह अपने जहाजों की, जो समुद्र पार से माल ला रहे थे, प्रतीक्षा कर रहा था। जब तक वे न



पहुँचते उसके हाथ में पैसा न आता। इसलिए वह अपने मित्र को लेकर शैलोक के पास गया। "मेरे जहाजों के आते ही मैं तुम्हें तुम्हारा कर्ज वापिस कर दूँगा। मुझे तीन हजार ड्यूकीट उधार दो।"

शैलोक ने सोचा कि बदला लेने के लिए वह अच्छा मौका था। उसने कहा-"जी, आपने मुझे कई बार कुता कह कर सम्बोधित किया। कई बार डाँटा धमका। क्या उसकी कृतज्ञता के रूप में तीन हजार ड्यूकीट उधार लेने आये हैं? कुत्ते के पास उधार देने के लिए भला तीन हजार ड्युकीट कहाँ होंगे?"

"उसका और इसका क्या सम्बन्ध है? जरूरत हुई तो मैं फिर तुम्हें डाँटूँगा। मजाक उड़ाऊँगा। मैं तुम से मित्र के नाते उधार नहीं माँग रहा हूँ। शत्रु मानकर ही दो। मय सूद के अपना पैसा वसूल कर लेना।" अन्टोनियो ने कहा।

"क्यों आप यों गरम होते हैं? मुझे तो आपका स्नेह चाहिये। आपने जो कुछ कहा वह सब भूल जाता हूँ। आपको जितना पैसा चाहिये वह दूँगा। आप से सूद भी न लूँगा।" शैलोक ने कहा। यह बातें सुनकर अन्टोनियो को अचरज हुआ।

"आप तीन हजार ड्युकीट ले लीजिए...... वकील से दस्तावेज लिखवा लीजिए...... मुझे सूद बूद कुछ नहीं चाहिये.... बस यह लिख दो कि फलाने दिन तक यदि पैसा वापस न दिया.... तो मैं अपने शरीर में से एक सेर माँस दूँगा.... यह तो मैं यूँहि कह रहा हूँ.... मेरा मतलब यह नहीं है कि आप पैसा वापस न दे सकेंगे।" शैलोक ने बड़ा प्रेम दिखाते हुए कहा।

"खैर..... मुझे कोई एतराज नहीं है। मैं नहीं जानता था कि तुम इतने अच्छे हो.... मैं इस तरह लिखे गये



दस्तावेज़ पर दस्तखत करूँगा।" अन्टोनियो ने कहा।

बसोनियो को अन्टोनियो का इस शर्त पर उधार लेना बिलकुल न जँचा। उसने इस पर आपत्ति उठाई।

"जो मैंने समय दिया है.... तब तक मेरे जहाज वापस आ जायेंगे। घबराओ मत।" अन्टोनियो ने कहा।

उसकी बातचीत सुनकर शैलोक ने कहा-"अरे, अरे, आप लोग भी कितना सन्देह करते हैं? क्या सारी दुनियाँ आप जैसी है? मैं सेर भर माँस लेकर क्या करूँगा! मैंने तो उनका स्नेह पाने के लिए दस्तावेज लिखवाया है.... अगर आप को सन्देह हो तो पैसा मत लीजिये।"

शैलोक की बातों से बसोनियो का सन्देह कुछ भी कम न हुआ। उसके बहुत मना करने पर भी अन्टोनियो ने उस यहूदी के पास से पैसा लिया और उसकी इच्छानुसार उसके दस्तावेज़ पर दस्तखत भी कर दिये।

वह पैसा लेकर बसोनिया, कुछ नौकर चाकर इकट्ठे करके ग्राशियो नाम के एक साथी को लेकर पोशिया के घर गया।





उसने पोशिया से कहा कि वह निर्धन था। पर उत्तम वंश का था। पोशिया ने तो उसके स्वभाव-गुणों से प्रेम किया था....न कि उसके रुपये-पैसे से। उसके पास तो अपना बहुत सा धन था ही।

उसने सविनय कहा-"आपकी पत्नी होने के योग्य बनने के लिए मैं दस गुना अधिक धनी क्यों नहीं हो जाती? दस गुना खूबसूरत क्यों नहीं हो जाती? मैं आपके लिए काफी शिक्षित नहीं हूँ। फिर भी मुझे आशा है कि आप मेरी कमियों को पूरा कर सकेंगे।"

पोशिया ने बसोनिया से विवाह करने की स्वीकृति सूचित करते हुए अपनी अंगूठी निकालकर उसको दी। आनन्दित हो बसोनिया ने प्रतिज्ञा की कि किसी भी हालत में उस अंगूठी को वह किसी और को न देगा।

एक तरफ तो बसोनिया का पोशिया से विवाह निश्चित हो रहा था, और दूसरी तरफ बसोनियों के साथी ग्राशियो का, पोशिया की सहेली; नेरिस्सा नाम की लड़की से विवाह तय हुआ। नेरिस्सा ने भी ग्राशियो को एक अंगूठी देकर, उससे प्रतिज्ञा करवाई कि वह किसी और को वह न देगा।

जब दोनों विवाह होनेवाले थे तो वेनिस से एक दुःखद बार्ता आई। अन्टोनियो के आदमी ने आकर बसोनियो को एक चिट्ठी दी। उस चिट्ठी में यह लिखा था। "प्रिय बसोनियो, मेरे सब जहाज समुद्र में डूब गये हैं। और जो अवधि मैंने दस्तावेज में लिखी थी, वह भी समाप्त हो गई है। मुझे कर्ज चुकाने के लिए अपने प्राण छोड़ने पड़ेंगे। मैं यह चाहता हूँ कि अन्तिम घड़ी में तुम मेरे

पास रहो। परन्तु यह जरूरी न समझो। तभी आओ जब तुम्हारी पत्नी तुम्हें आने के लिए अनुमति दे दे।"

चिट्ठी पढ़कर बसोनियो को दुःखित पा पोशिया ने सोचा कि उसका कोई समीप का बन्धु मर मरा गया था। अन्टोनियो की चिट्ठी पढ़ने के बाद उसने बसोनियो से कहा-"एक क्षण भी आप देर न कीजिये। अपने मित्र के पास तुरन्त जाइये।"

उसने तुरन्त पुरोहित को बुलवाकर अपना विवाह सम्पन्न किया। ऐसा करने से ही बसोनियो को पोशिया की सम्पत्ति पर अधिकार मिलता था। पोशिया और बसोनियो के विवाह के साथ, नेरिस्सा और ग्राशियो का विवाह भी हो गया। विवाह समाप्त होते ही बसोनियो अपने साथी को लेकर वेनिस पहुँचा।

अन्टोनियो को कैद में डाल दिया गया था। अगले दिन ही वेनिस के राजा के यहाँ सुनवाई थी। बसोनियो ने शैलोक के पास जाकर कहा कि अन्टोनियो का कर्ज वह चुका देगा। "अवधि समाप्त हो गई है। मुझे पैसा नहीं चाहिये।" शैलोक ने कहा।



बसोनियो के चले जाने के बाद, पोशिया हाथ पर हाथ रखकर न बैठी रही। उसने अन्टोनियो को छुड़वाने का निश्चय किया।

वेनिस नगर में उसका एक सम्बन्धी वकील रहा करता था। उसका नाम बेलोरियो था। पोशिया अपनी सहेली को लेकर उसके पास गई। उसने अन्टोनियो का मामला बताकर उसकी सलाह माँगी। बेलोरियो ने बताया भी कि उसे क्या करना चाहिये था।

फिर पोशिया ने वकील के कपड़े पहने, आदमी का वेष धारण किया, और अपनी सहेली को गुमाश्ता बनाया। दोनों

मिलकर अन्टोनियो की सुनवाई में हाजिर हुए। वेलोरियो के पास से वह राजा के नाम एक चिठ्ठी लाई थी। बेलोरियो ने लिखा था कि वह अन्टोनियो की वकालत करना चाहता था। परन्तु तबियत ठीक न होने के कारण वह अपने बदले एक नौजवान वकील को भेज रहा था। राजा इसके लिए मान गया।

मुकदमा शुरु हुआ। बसोनियो वहीं था, पर उसने अपनी पत्नी को नहीं पहचाना। पोर्शिया ने उठकर शैलोक से कहा-"अन्टोनियो के वचन के अनुसार तुम्हें उसका शरीर काटकर हरजाना लेने का ही हक है। परन्तु वह सज्जनों का काम नहीं है। राजा महाराज भी राज्य नहीं कर सकते, अगर उनमें दया न हो। इसलिए तुम हरजाने के लिए हठ न करो। तुम्हें जितना पैसा मिलना है उससे दुगना माँगो या तिगुना माँगो।"

"मैं यही चाहता हूँ कि इस दस्तावेज के मुताबिक सब कुछ हो।" शैलोक ने कहा।

"अगर तुम यही चाहते हो तो तुम अपना सेर भर माँस ले लो। तुम अन्टोनियो



के किसी भाग से भी यह माँस ले सकते हो।" पोशिया ने कहा।

शैलोक खुश हो छुरी लेकर तेज करने लगा। अन्टोनियो ने सोचा कि उसकी मौत नजदीक आ गई थी। उसने बसोनियो

से विदा लेते हुए कहा "तुम यह न सोचना कि मैं तुम्हारी वजह से मर रहा हूँ। तुम अपनी पत्नी को बताना कि मैंने तुम्हें कितना प्रेम किया था।"

शैलोक अन्टोनियो से बदला लेने के लिए उतावला हो रहा था। "सेर भर माँस तोलने के लिए क्या तराजू तैयार है? कहीं अन्टोनियो रक्तस्राव से मर न आये। इसलिए तुम वैद्य को बुलाओ।" पोशिया ने कहा।

"यह बात तो उस दस्तावेज़ में नहीं है।" शैलोक ने कहा। वह यही चाहता था कि अन्टोनियो मर जाये।

"अच्छा, तुम अपना सेर माँस ले लो। इस पर न कानून को आपत्ति है न अदालत को ही।" पोशिया ने कहा। शैलोक खुशी खुशी छुरी लेकर अन्टोनियो के पास गया।

"जरा ठहरो। यह भी तो सोचो। शर्त के अनुसार तुम सेर भर ही माँस ले





सकते हो। अन्टोनियो का एक बून्द भी खून तुम नहीं ले सकते। इस दस्तावेज में खून का कहीं जिक्र ही नहीं है। अन्टोनियो का माँस लेते समय अगर कहीं एक बून्द मी खून गिरा तो तुम पर हत्या का इल्जाम लगेगा और तुम अपनी सारी सम्पत्ति खो बैठोगे। दण्ड मिलेगा।" पोशिया ने कहा ।

शैलोक हैरान हो खड़ा हो गया। अदालत में सब तालियाँ पीटने लगे। शैलोक अपने गढ़े में आप ही गिर रहा था। बिना खून बहाये, शैलोक के लिए सेर भर माँस तो अलग एक छटाँक भी लेना सम्भव न था।

"अच्छा तो मेरा पैसा मुझे दिलवा दीजिये।" शैलोक ने कहा।

"अभी दे देता हूँ।" बसोनियो आनन्द से चिल्लाया।

"यह नहीं होगा। फरियादी ने अपना हरजाना ही माँगा था। अदालत उनको हरजाना दिलवादेगी। शैलोक, तुम अपना सेर भर माँस ले लो। देखना ठीक एक सेर माँस ही लेना। अगर एक रत्ती भी अधिक या कम लिया तो तुम्हें दण्ड मिलेगा।" पोशिया ने कहा।

अदालत में सबने उसके प्रति अपनी घृणा व्यक्त की। शैलोक का अपमान हुआ। वह जान बचाकर अदालत से चला गया। अन्टोनियो को छोड़ दिया गया। वेनिस के राजा ने पोशिया की योग्यता की प्रशंसा कर उसको अपने घर न्योता दिया। पर उसने उनका निमन्त्रण यह कहकर टाल दिया कि उसे जरूरी काम था।

अपने मित्र के प्राणों को बचानेवाले वकील को बसोनियो ने रुपया देना चाहा। परन्तु पोशिया ने रुपया लेने से इनकार

कर दिया। उसने उससे (अपनी दी हुई) अंगूठी माँगी ताकि उसकी याद हमेशा बनी रहे। यह जानकर भी कि उससे उसकी पत्नी का अपकार होगा, बसोनिया अंगूठी दिये बगैर न रह सका। उसी तरह गुमश्ता के वेष में नेरिस्सा ने अपने पति के पास से अपनी अंगूठी इनाम में ले ली। फिर पोशिया और नेरिस्सा बेल्मोन्ट बापस चले गये। वे मामूली कपड़े पहनकर अपने पतियों की इन्तजार करने लगीं।

थोड़ी देर बाद, बसोनियो, अन्टोनियो और ग्राशियो वहाँ आये। बसोनियो ने अपने मित्र का परिचय कराया। वह अदालत की कार्यवाही उसे बताने लगा। इस बीच नेरिस्सा, ग्राशियो झगड़ा करने लगे। "मेरी अंगूठी किसको दी है....बता।"

पोशिया ने पूछा-"क्यों यों झगड़ रहे हो?"

"देखिये, मुझे एक मामूली अंगूठी के लिए कितना तङ्ग कर रही है।" ग्राशियो ने कहा।

"वह मामूली अंगूठी है! तुमने आज सवेरे ही तो प्रतिज्ञा की थी



कि उसे किसी को न दोगे।" नेरिस्सा ने कहा।

"अन्टोनियो की रक्षा करनेवाले वकील के गुमाश्ता ने इसको लेने के लिए जिद की। मैंने दे दी। इस में क्या खराबी है?" ग्राशियो ने कहा।

"हाँ, खराबी है। मैंने अपने पति को अंगूठी दी थी। वे किसी भी हालत में, उसे किसी और को न देंगे। चाहो तो उनसे पूछो।" पोर्षिया ने ग्राशियो से कहा।

"वाह, उसने भी अपनी अंगूठी उस वकील को दे दी है। चाहे तो आप खुद पूछकर देखिये।" ग्राशियो ने कहा। पोर्षिया ने बसोनियो पर क्रोध का अभिनय किया। उसको जलीकटी भी सुनाई।

यह सब देख कर अन्टोनियो ने कहा-"मैं भी कितना मनहूस हूँ। मेरे कारण ही तो तुम यो झगड़ रहे हो।"

कम से कम आगे फिर यह न करना। जो हो गया, सो हो गया। आगे के लिए आप अपने मित्रों को आगाह कर दीजिये।" कहते हुये पोर्षिया ने अपनी अंगूठी अन्टोनियो को दी।

उस अंगूठी को बसोनियो लेकर अचरज करने लगा। फिर पोर्षिया ने सच बता दिया। यह जानकर कि अन्टोनियो की वकालत पोर्षिया ने ही की थी अन्टोनियो, बसोनियो बहुत चकित हुये। उस खुशी के मौके पर एक और खुश खबरी मिली। वे जहाज, जिनके बारे में कहा गया था कि समुद्र में डूब गये थे, माल लेकर बन्दरगाह में पहुँच गये थे।"





राहगीर दुलहा



विक्रमार्क तो हार मानना जानता ही न था। वह फिर पेड़ के पास गया, शव को उतार कर, कन्धे पर डालकर श्मशान की ओर चल पड़ा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा-"राजा! एक भिखारी के कहने मात्र से इतना कष्ट उठा रहे हो। तुम्हारे निरहङ्कार के बारे में तो कहना ही क्या? प्रायः क्षत्रियों में बहुत अभिमान होता है। इसका दृष्टान्त दुर्जय की पत्नी, जाम्बवती है। जाम्बवती की लड़की, माधुरी की बड़े अजीब ढङ्ग से शादी हुई। वह बताता हूँ, सुनो।" उसने यो कहानी शुरू की।

कमी, चालुक्य और कलिङ्गों में एक महायुद्ध हुआ। उस युद्ध में दोनों तरफ के कई वीर योद्धा मारे गये। परन्तु विजय किसी भी पक्ष की नहीं हुई। दोनों



में पारस्परिक द्वेष बढ़ता गया। युद्ध में मारे गये वीरों में दुर्जय भी था। वह राजवंश से सम्बन्धित था। परन्तु बहुत दिन पहले ही उसका राज्य चला गया था। वह खानदानी आदमी की तरह जिया। जङ्गल में एक महल बनवाकर, उसमें अपने परिवार के साथ वह रहा करता था। न उसका न उसके परिवार का ही औरों से अधिक सम्बन्ध था। राज्य चले गये थे। पर उनमें तब भी राजाओं का अभिमान था।

युद्ध में दुर्जय के मारे जाने के बाद उसकी पत्नी बड़ी अक्लमन्दी से परिवार चला रही थी। उसके एक लड़की थी, माधुरी। दुर्जय वंश पर एक शाप था। उस वंश में जन्म लेनेवाली लड़कियों का अट्ठारहवाँ वर्ष पूरा होने से पहले विवाह हो जाना चाहिये, नहीं तो वे उन्नीसवें जन्म दिवस पर मर जायेंगी। पिछली पाँच छः पीढ़ियों में दो कन्यायें इसी तरह मर गई थी। ठीक समय पर उनको उचित सम्बन्ध न मिलने पर ही वे मर गई थीं।

माधुरी का अट्ठारहवाँ वर्ष चल रहा था। पर उसे शाप का भय न था, क्योंकि उसका पति पहले ही निश्चित हो चुका था। उसका नाम विरूपाक्ष था। उसकी तीस वर्ष की उम्र थी। वह बहुत ही साहसी, बलवान और वीर था। वह भी दुर्जय की तरह राजवंश से सम्बन्धित था। माधुरी देखने में जितनी भोली माली थी, उतना ही विरूपाक्ष कठोर-सा था। फिर भी वह छुटपन से ही माधुरी पर जान देता आया था।

जाम्बवती की दृष्टि में विरूपाक्ष ही उसकी लड़की के लिए हर तरह से उपयुक्त पति था, क्योंकि कुल में या गुण में उसकी बराबरी करनेवाला कोई न था।

यही नहीं, यह दुर्जय के परिवार की भी रक्षा करता और जाम्बवती के अधिकारों पर आँच नहीं पड़ने देता।

परन्तु माधुरी को बचपन से न जाने क्यों विरूपाक्ष से भय था। जब वह पास आता, तो दूसरी तरफ देखने लगती। जब उसकी आवाज़ सुनती तो उसे लगता जैसे बिजली का गर्जन सुन रही हो। वह बड़े प्रेम से कुशल प्रश्न पूछता। पर वह उत्तर देते देते काँपती। माँ के निरन्तर कहने पर, उसे भी विश्वास हो गया कि विरूपाक्ष से अच्छा पति न मिल सकता था।

कल अठ्ठारहवाँ वर्ष पूरा होता था कि उसके विवाह की व्यवस्था होने लगी। रात को मुहूर्त था। माधुरी को दुल्हन बनाया गया। घर सजाया गया। बरातियों की प्रतीक्षा की जा रही थी।

सूर्यास्त तक भी बराती न आये....जब कि उन्हें आ जाना चाहिए था। जाम्बवती घबराने लगी। काफ़ी अन्धेरा हो जाने के बाद, विरूपाक्ष के बारे में खबर मिली। यह विवाह के लिए निकला ही था कि कोई शत्रु आया, उससे उसका



द्वन्द्व-युद्ध हुआ और उस युद्ध में विरूपाक्ष घायल होकर मर गया।

यह दुःख खबरी सुनते ही जाम्बवती की मानों रीढ़ ही टूट गई। और कभी यह खबर मिलती तो वह बहुत दुःखी हुई होती। अब उसके पास दुःखी होने के लिए भी समय न था। अगर दो चार घण्टे में लड़की की शादी न हुई तो सवेरा होने से पहले उसकी मृत्यु होकर रहेगी।

उस बिपत्ति से बचने के लिए उसे एक ही उपाय सूझा। रास्ते में किसी आने जाने वाले से, मुहूर्त पर माधुरी

की शादी करना ही। बाकी सब भगवान की इच्छा थी।

जाम्बवती ने पति की बहन को बुलाकर कहा-"तुम बड़ी हो, अनुभवी हो, सूझबूझवाली हो। एक काला कम्बल ओढ़कर, ताकि किसी को कुछ न मालूम हो, रास्ते के बगल में खड़ी हो जाओ। रास्ते में जाते किसी युवक को देखकर, जो हमारी लड़की के लिए भले ही थोड़ा बहुत ही योग्य हो, बिना कुछ कहे, उसे ले आओ। नहीं तो लड़की हमारी नहीं रहेगी।"

दुर्जय की बड़ी बहन बहुत कामकाजी थी। वह उस अन्धेरे में जङ्गल में से होती हुई रास्ते पर पहुँची। तभी चन्द्रोदय हो रहा था।

वह रास्ते के पास बहुत देर तक खड़ी रही। परन्तु कोई भी उस तरफ न आया। वह सोच रही थी कि शायद कोई न आये और माधुरी जिन्दा न रहे कि घोड़े के आने की ध्वनि सुनाई दी। थोड़ी देर बाद एक युवक घोड़े पर सवार हो आता दिखाई दिया।

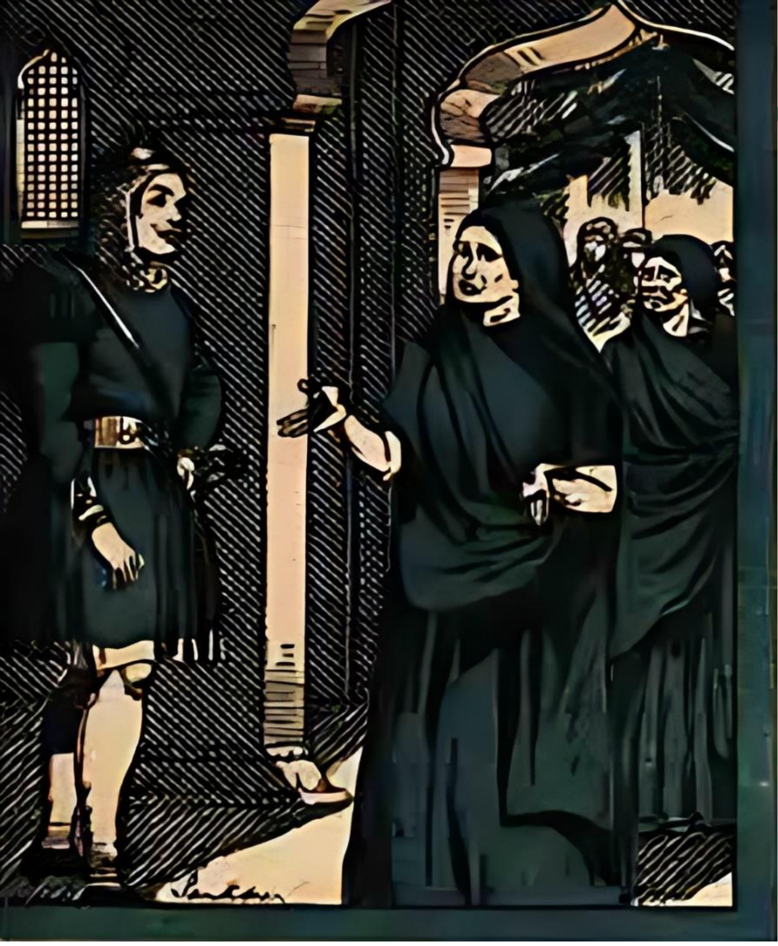


उस चान्दनी में, थोड़ी दूर पर ही वह सवार था कि बुढ़िया जान गई कि वह युवक पच्चीस वर्ष से अधिक न था। वह अच्छे वंश का था। माधुरी के लिए किसी प्रकार भी वह अनुपयुक्त न था। उसको रोकने के लिए वह रास्ते के बीचों बीच खड़ी हो गई।

घोड़े पर जो आदमी चला आ रहा था, उसका नाम था कान्तिवर्मा। वह कलिङ्ग देश का था। उसकी भी बहुत-सी जमीन जायदाद थी। उसने बहुत दिनों तक शादी के लिए कोशिश की। परन्तु ठीक लड़की कहीं न मिली। वह किसी लड़की से शादी करके घरवार बसाना चाहता था। इसीलिए कृष्णा नदी के किनारे जा रहा था। वहाँ उसके पिता का एक मित्र था। वह उसकी लड़की से विवाह करना चाहता था। उस लड़की से उसे प्रेम न था। जब बिना प्रेम के विवाह करना ही था तो किसी भी लड़की से शादी की जा सकती थी।

रास्ते में किसी को देख उसने लगाम खींची। घोड़ा रुका। बुढ़िया ने उसके पास जाकर कहा- "भगवान ने तुम्हें भेजा है। क्या तुम मेरे साथ आ सकोगे?"





कान्तिवर्मा जान गया कि वह स्त्री थी और बुढ़िया थी। उसने पूछा- "कहाँ? क्या काम है?"

"वह सब बताने लगें तो मुहूर्त निकल जायेगा। अगर डरपोक न हो तो मेरे साथ आओ। तुम्हारा कोई अशुभ न होगा।" कहती हुई बुढ़िया जङ्गल में रास्ता दिखाने लगी। कान्तिवर्मा बिल्कुल न डरा। और तो और उसका कुतूहल जगा। शायद उसे कोई नया अनुभव होने जा रहा था। घोड़े से उतरकर उसको चलाता, वह बुढ़िया के पीछे-पीछे चला।

दोनों थोड़ी देर में घर पहुँचे। घर को सजा पा, कान्तिवर्मा ने सोचा कि शायद कोई शादी वगैरह हो रही थी। जाम्बवती ने उसे देखकर कहा-"अच्छा है। मैंने न सोचा था कि ऐसा भी आदमी मिलेगा।"

कान्तिवर्मा कुछ झुञ्झलाया। "मुझसे किसी ने न कहा कि काम क्या है।"

"बेटा, मेरी एक ही लड़की है। वह सवेरे होते जिन्दा न रहेगी। मैं किस आफत में हूँ यह तुम अनुमान कर सकते हो। मेरी लड़की को देखोगे तो मेरे दुःख तुम और अच्छी तरह समझ सकोगे।" जाम्बवती ने कहा।

कान्तिवर्मा को कुछ समझ में न आ रहा था। जाम्बवती के साथ जाकर, दीयों की चमचमाती रोशनी में चमकती माधुरी को देखा। उसने उतनी सुन्दर स्त्री की कभी कल्पना भी न की थी। वह उसे अप्सरा-सी लगी।

"क्या यह वही लड़की है?" कान्तिवर्मा ने पूछा।

"हाँ बेटा, तुम जान सकते हो कि मेरी क्या हालत हो सकती है, जब

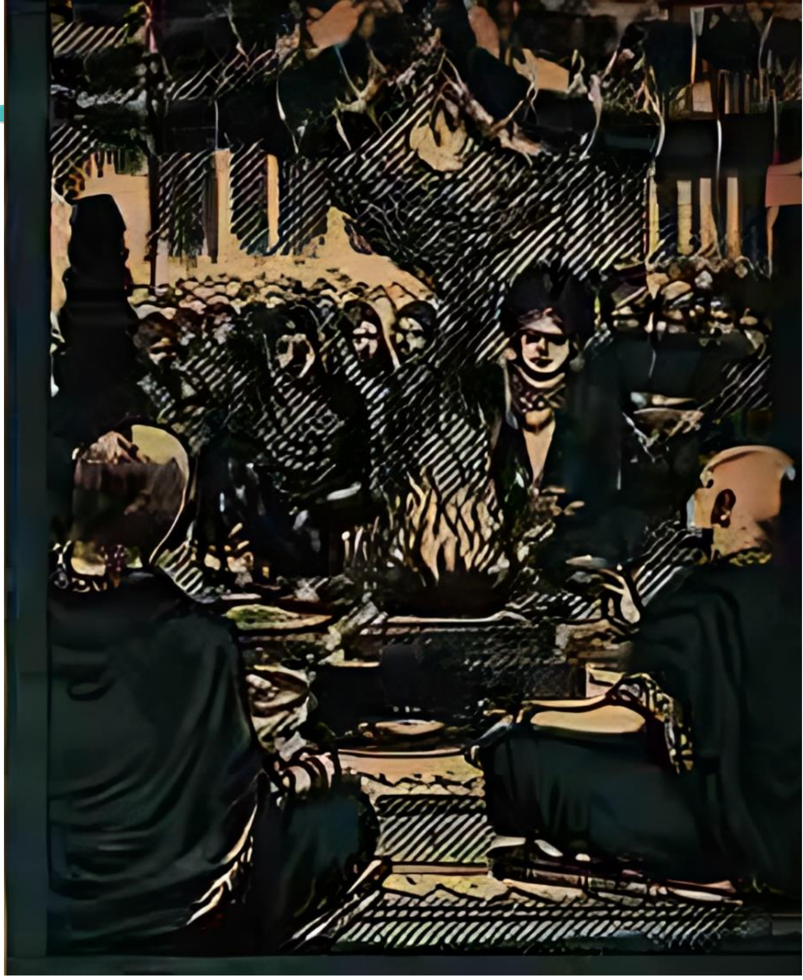
यह सवेरे लाश होने जा रही है।" जाम्बवती ने कहा।

वह पूछनेवाला ही था कि उसे क्या बीमारी है कि माधुरी ने उसकी ओर देखा। तुरन्त उसके आँखों में कुछ कौंधा, वे लाल पड़ गईं। जबसे होश सम्भाला था तबसे वह पति के रूप में विरूपाक्ष की कल्पना करती आई थी। उसके मर जाने के बाद, जब उसे मालूम हुआ कि किसी राह चलते से उसका विवाह कर दिया जायेगा तो उसने उससे भी बदसूरत आदमी की कल्पना की थी। इसी कारण उसकी आँखों को कान्तिवर्मा मन्मथ सा लगा।

कुछ भी हो, कान्तिवर्मा और माधुरी को एक दूसरे को देखकर प्रेम हो गया। कान्तिवर्मा कुछ पूछनेवाला ही था कि पुरोहित ने आगे बढ़कर कहा-"जाम्बवती देवी, आलस्य हुआ तो मुहूर्त निकल जायेगा।"

"मेरी तरफ से कोई देरी नहीं है।" जाम्बवती ने कहा।

माधुरी और कान्तिवर्मा को बिठाया गया और तुरन्त उनकी शादी कर दी गई। कान्तिवर्मा, ऐसी बात नहीं, कि स्वाभिमानी न था। उससे किसी



ने न पूछा-"क्या इस लड़की से शादी करोगे? मामूली नौकर को जिस तरह आज्ञा दी जाती है, उसे भी दी गई-"इन कपड़ों को पहनो, वहाँ बैठो।"

माधुरी के लिए उसमें जो प्रेम पैदा हो गया था, उसके लिए ही उसने वह सब कुछ सह लिया। यह बात साफ थी कि माधुरी उससे प्रेम कर रही थी। जब वे विवाह वेदि पर थे, तो उसने उसकी ओर कई बार देखा, वह मुस्कराई। सिर झुका लिया। विवाह के बाद सब भोजन के लिए बैठे। तब जाम्बवती ने अपने दामाद के

कुल-गोत्र के बारे में पूछा। जब उसे मालूम हुआ कि यह कलिङ्ग देश का था तो उसे कुछ बुरा लगा। उसका पिता भीरवर्मा कलिङ्ग और चालुक्य के युद्ध में कलिङ्गों की ओर से लड़ा था। और युद्ध में वह मारा गया था। उसे जब यह मालूम हुआ तो वह स्वयं मर-सी गई।

"क्या अन्याय है। कितना भयङ्कर। मेरे पति को, हो सकता है, युद्ध-क्षेत्र में तेरे पिता ने ही मारा हो। तुम्हारी जाति हमारी शत्रु है। शादी जो हुई सो हुई। अपनी लड़की की जान बचाने के लिए मैं किसी राहगीर से ही उसकी शादी कर देती, पर मैं उसको ससुराल न भेजूँगी। उसका मर जाना ही तेरे साथ गृहस्थी निभाने से कहीं अच्छा है। बिवाह यहीं खतम हो गया, समझो। भोजन के बाद तुम अपना रास्ता पकड़ो।" जाम्बवती ने कान्तिवर्मा से कहा।

शायद कान्तिवर्मा गरमा गरम उत्तर देता, पर माधुरी की आँखों में आँसू देखकर उसने कहा-"सासजी, आपने जो कहा, मैंने किया। इसलिए आप



शायद मुझे निकम्मा समझ रही हैं। मैं अपनी पत्नी को साथ ले जाऊँगा। इस विषय में आप सन्देह न कीजिये।"

इस बीच वहाँ लड़खड़ाता लड़खड़ाता एक हट्टा-कट्टा आदमी आया। उसके कपड़े खून से लथपथ थे। उसको देखते ही जाम्बवती ने कहा-"विरूपा! ज़िन्दा हो? अब तक कहाँ थे बेटा! समय पर तुम थे नहीं, इसलिए निष्कारण लड़की का गला घोंटना पड़ा।" कहते हुए उस विरूपाक्ष को, जो कुछ गुज़रा था, जाम्बवती ने कह सुनाया।

विरूपाक्ष ने सब सुनकर कहा-"दुष्ट कहीं का! जिस लड़की से मैं विवाह करना चाहता था, उसे तुम ले जाओगे? देख, तेरी खबर लेता हूँ।" उसने तलवार निकाली।

कान्तिवर्मा ने एक बार माधुरी की ओर देखा। उसे विरूपाक्ष की ओर देखकर डरता पा उसे खुशी हुई। उसने विरूपाक्ष से कहा-"मैंने किसी की कोई लड़की नहीं ली है। बिना मेरी अनुमति पाये, मुझे रास्ते से ये लाये और इससे शादी करा दी। मैंने उसे प्रेम किया है। मैंने उसे प्रेम किया है। लगता है कि वह भी मुझसे प्रेम करती है।





इसलिए तुम्हारा मुझ से झगड़ना अच्छा नहीं मालूम होता।"

यह विरूपाक्ष के सिर में न घुसा। पहले ही वह एक और झगड़े में घायल होकर काफी खून खो बैठा था। "तेरे इन घाबों के भरने तक मैं यूँ ही तुमसे युद्ध करता रहूँगा।" कान्तिवर्मा के कहने पर भी विरूपाक्ष ने खौलकर कहा-"आज रात ही, तुझे या मुझे मरना होगा। अगर मर्द हो तो आओ, लड़ो।"

"मैं तुम से युद्ध नहीं करूँगा। मुझे न उकसाओ।" कान्तिवर्मा ने कहा।

यह सुनते ही जाम्बवती ने कान्तिवर्मा को जली कटी सुनाई। "कलिङ्ग सब बुज़दिल हैं। दुर्जय की लड़की, बुज़दिल के साथ गृहस्थी न चलायेगी।" उसने कहा।

आखिर कान्तिवर्मा खाता, खाता उठा और तलवार हाथ में लेकर आगे आया। विरूपाक्ष और वह घर से कुछ दूर लड़ने के लिए स्थल देखने गये। बाहर चान्दनी में दोनों जानी दुश्मन की तरह खड़े हो गये। कान्तिवर्मा ने अपनी तलवार उठाकर विरूपाक्ष के बार को रोका। इस तरह काफी देर तक युद्ध चलता रहा। फिर विरूपाक्ष के घावों से खून बहने लगा। वह मूर्छित हो गिर पड़ा।

जब उसको होश आया तो उसे कान्तिवर्मा का मुँह दिखाई दिया।

"मुझे कहाँ भोंका है?" विरूपाक्ष ने पूछा।

"मैंने तुम्हें कहीं नहीं भौका है! घायल थे, इसलिए तुम खुद मूर्छित हो गये। सिवाय डरपोकों के कोई बहादुर घायलों से नहीं लड़ता।" कान्तिवर्मा ने कहा।

"यह देख कि तू माधुरी को ले जा रहा है, मुझे गुस्सा आ गया। क्या

माधुरी तुम से सचमुच प्रेम कर रही है?" विरूपाक्ष ने पूछा ।

"क्या तेरी आँखे नहीं हैं? उसने तेरी तरफ कैसे देखा, और मेरी तरफ कैसे देखा? क्या तुमने यह नहीं देखा?" कान्तिवर्मा ने पूछा।

विरूपाक्ष ने लम्बी साँस छोड़कर कहा-"मैं तो माधुरी का सुख ही चाहता हूँ।" कहता कहता बह कान्तिवर्मा की सहायता

से वापस घर गया। उन दोनों को देखकर जाम्बवती दह-सी गई। "क्योंकि वे सब मार्यादायें हो चुकी हैं जो दामाद के लिए की जाती हैं, मैं अपनी पत्नी को लेकर जा रहा हूँ। क्या कोई रोकनेवाला है?" कान्तिवर्मा ने जाम्बवती से पूछा।

"यह क्या बेटा! नये दम्पति को तीन रातें बितानी होती हैं। सोलहवें दिन त्यौहार करना होगा। तब लड़की ससुराल भेजी जाती है।" जाम्बवती ने कहा।

कान्तिवर्मा यह जानकर प्रसन्न हुआ कि उसके प्रति उसकी सास का दृष्टिकोण बदल गया था।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा-"राजा, मुझे एक सन्देह है। जाम्बवती



ने कान्तिवर्मा के बारे में अपना ख्याल क्यों बदला? क्या इस कृतज्ञता के कारण कि उसने उनके सहायक विरूपाक्ष को न मारा था? या इस भय से कि विरूपाक्ष के हारे जाने के बाद उसके हठ को पूरा करनेवाला कोई न था। इन प्रश्नों का तूने जान बूझकर उत्तर न दिया तो तेरा सिर टुकड़े टुकड़े हो जायेगा।

"जाम्बवती के बदलने के जो दो कारण तूने बताये हैं, वे बिल्कुल नहीं हैं। उसने अपनी जाति के अहङ्कार के कारण ही

कान्तिवर्मा से द्वेष किया था। विरूपाक्ष जिन्दा है, यह जानने से पहले ही उसने कान्तिवर्मा को दामाद स्वीकार करने से इनकार कर दिया था। तो भी जाति के अहङ्कार का भी तो कोई आधार होना चाहिये। जाम्बवती की दृष्टि में कलिङ्ग और चालुक्य शत्रु थे। परन्तु यह साफ हो गया कि कान्तिवर्मा में वह शत्रुता न थी। वह विरूपाक्ष को मार सकता था; पर उसने न मारा। इससे यह सिद्ध हो गया कि उसमें चालुक्यों के लिए कोई द्वेष न था। यही नहीं, कान्तिवर्मा में जाति सुलभ अहङ्कार न था। जब विरूपाक्ष उसे ललकार रहा था, उसे चुप देख, जाम्बवती ने उसे डरपोक समझा। वह कायर न था, जाति सुलभ अहङ्कार का न होना उसमें एक गुण ही है, यह जानते ही जाम्बवती ने भी अपना अहङ्कार त्याग दिया। यही उसके परिवर्तन का कारण था।" विक्रमार्क ने जवाब दिया।

राजा का इस प्रकार मौन भङ्ग होते ही बेताल शव के साथ अदृश्य हो गया और पेड़ पर जा बैठा।

(कल्पित)





एक शहर में तीन भाई रहा करते थे। उनके घर अगल बगल में थे। उनकी आँखें बहुत ही कमजोर थीं। कोई वस्तु तब तक न दीखती, जब तक उसे ठीक अपनी नाक के पास न रखते।

एक दिन वे तीनों बड़े भाई के घर बैठकर गप्पें मार रहे थे। बड़े भाई ने कहा-"मेरी नजर काफी अच्छी हो गई है। कुछ दूरी पर मुझे यदि मच्छर भी दिखाई दिया, तो मैं बता सकता हूँ कि वह मादा है या नर।"

"सप्ताह पहले ही तो तुम बेहगीवाले पर गिरे थे!" मञ्झले भाई ने कहा।

"दिन की बात छोड़ो। अन्धेरे में मेरी नजर और भी तेज हो जाती है।" बड़े भाई ने कहा।

"परीक्षा लो, तो पता लग जायेगा कि किसकी नजर कितनी अच्छी है।" छोटे भाई ने कहा।

"क्या है वह परीक्षा?" मञ्झले भाई ने पूछा।

"सुनो, बताता हूँ। हमारी गली के सामने जो सराय है उसके दरवाजे पर, सवेरे, धर्मोपदेश की शिला लगाई जा रही है। उस शिला पर खुदे अक्षरों का पढ़ना ही हमारी परीक्षा है। उसके अक्षर, जो हम में सबसे अधिक नजदीक खड़े होकर पढ़ेगा, वह हार जायेगा। जो हारेगा, उसको बाकी को भोजन खिलाना होगा। यह शर्त रही।" छोटे भाई ने कहा। दोनो भाई यह मान गये। दोनों भाइयों के चले जाने के बाद बड़ा भाई घबराने लगा, क्योंकि शिला को नाक के पास



रखे बगैर वह पढ़ नहीं सकता था। बहुत देर तक सोचने के बाद उसे एक बात सूझी। सराय में एक गुमाश्ता था। यदि उससे पूछा गया तो वह बता देगा कि उस शिला पर क्या खुदा हुआ था।

यह बात सूझते ही बड़ा भाई, कन्धे पर दुपट्टा डालकर सराय गया। "लगता है किसी काम पर आये हैं।" सराय के गुमाश्ता ने कहा।

"कुछ नहीं, कल जो शिला लगवा रहे हैं उस पर आपने क्या लिखवाया है?" बड़े भाई ने पूछा।

"कुछ नहीं। 'श्रीराम कृपा' लिखवाया है।" गुमाश्ता ने कहा।

बड़ा भाई खुश हुआ। वह घर की ओर चला। सराय के दरवाजे के पास मञ्झला भाई दिखाई दिया। दोनों की नजर बहुत कमजोर थी ही। इसलिये उन्होंने एक दूसरे को नहीं पहचाना।

जो बात बड़े भाई को सूझी थी, वही बात छोटे भाई को भी सूझी। उसने भी जाकर गुमाश्ता से पूछा कि शिला पर क्या लिखवाया था। दोनों को यही पूछता देल गुमाश्ता को अचरज हुआ। उसने उसको भी वही बताया जो उसके बड़े भाई को बताया था।

मञ्झला उससे सन्तुष्ट न हुआ। उसने पूछा-"शिला किस रङ्ग की है? अक्षर किस रङ्ग में खोदे गये हैं?"

"सफेद सङ्गमरमर के पत्थर पर सुनहरे अक्षर हैं।" गुमाश्ता ने कहा।

मञ्झले भाई के चले जाने के बाद, छोटे भाई ने आकर गुमाश्ता से वही पूछा, जो बड़े भाई ने पूछा था। गुमाश्ता ने बता दिया।

"श्रीराम कृपा के नीचे क्या उसका नाम नहीं दिया गया है, जिसने यह शिला दी है?" छोटे भाई ने पूछा।

"छोटे अक्षरों में फलाने का नाम खुदवाया है। अब शायद पूछना चाहेंगे कि वह किस रङ्ग में है? लाल रङ्ग में।" गुमाश्ता ने कहा।

तीनों भाई "मैं जीतूँगा, मैं जीतूँगा।" सोचते सोचते सो गये। सवेरे होते ही, बड़े भाई के घर दोनों भाई आये। शिला देखने के लिए सब उतावले हो रहे थे। इसलिये तीनों बिना देरी किये गली में निकल पड़े। बड़े भाई ने झट रुककर सराय की ओर देखकर कहा "और पास जाने की क्या जरूरत है? शिला के अक्षर यहाँ से दिखाई दे रहे हैं। क्या पढ़ूँ? 'श्रीराम कृपा' बहुत साफ दिखाई दे रहा है।

यह सुन दोनों छोटे भाई हैरान रह गये। उन्होंने सोचा कि वे हार गये थे। मञ्झले भाई ने पूछा-"शिला किस रङ्ग की है? अक्षर किस रङ्ग में हैं?"

बड़े भाई को लगा जैसे वह किसी गढ़े में गिर पड़ा हो। "रङ्ग? क्या तुझे रङ्ग दिखाई दे रहा है?" उसने मञ्झले भाई से पूछा।



"रङ्ग क्यों नहीं दिखाई देता? क्या सफेद पत्थर पर सुनहरे अक्षर नहीं दिखाई दे रहे हैं?" मञ्झले ने पूछा।

"तुम दोनों क्यों लड़ रहे हो? यह देखो कि इस शिला में खुदे छोटे अक्षर कोई पढ़ पाता है कि नहीं। बड़े अक्षर तो अन्धा भी पढ़ सकता है।" मञ्झले भाई ने कहा।

"क्या शिला पर छोटे अक्षर भी खुदे हैं?" बाकी दो भाइयों ने पूछा।

"दीख तो रहे हैं। लाल अक्षरों में फलाने का नाम साफ लिखा तो है। तुम क्या सोच रहे हो? तुम दोनों की नजर से मेरी नजर अच्छी है।" मञ्झले भाई ने कहा।

बड़े भाई ने कहा-"तेरी नज़र हम तीनों में सबसे अच्छी है। तेरे बाद मेरी नजर अच्छी है। बड़े अक्षरों को मैंने ही तो पढ़ा था। तुम आगे आ रहे थे, मैं ही तो यहाँ रुका था। इसलिये मैं और तुम मञ्झले से भोजन लेंगे।" मञ्झले ने इस पर एतराज किया। "जो यह न देख सका कि शिला किस रङ्ग की है, अक्षर किस रङ्ग में हैं; उसने अक्षर पढ़े होंगे, कैसे विश्वास किया जा सकता है?"

इसका तीनों काफी देर तक झगड़ा करते रहे। आखिर उन्होंने किसी से फैसला करवाने की सोची। इतने में सराय का गुमाश्ता उस तरफ आया-"आप कौन हैं? जरा हमारा झगड़ा निबटाते जाइये। क्या यह झूठ है कि उस शिला पर "श्रीराम कृपा" नहीं लिखा हुआ है?" बड़े भाई ने पूछा।

"नहीं, तो" गुमाश्ता ने कहा।

"शिला सफेद सङ्गमरमर की हैं कि नहीं? उस पर सुनहरे अक्षर हैं न? मञ्झले भाई ने पूछा।

"हाँ, हाँ!" गुमाश्ता ने कहा।

"छोटे अक्षरों में फलाने का नाम खुदा है और अक्षर लाल रङ्ग के हैं। मैं ठीक कह रहा हूँ न?" तीसरे ने पूछा।

"हाँ!" गुमाश्ता ने कहा।

फिर तीनों भाई कहने लगे-"मेरी नज़र अच्छी है।" "मेरी नज़र अच्छी है।" वे फिर आपस में झगड़ने लगे।

सराय के गुमाश्ता ने उन्हें रोक कर कहा-"तुम तो काले सफेद में भी भेद नहीं जान पाते हो। मेरी राय में तुम तीनों की नजर एक जैसी ही है। क्योंकि अभी तक सराय के दरवाजे पर शिला लगाई ही नहीं गई है।" वह यह कहकर अपने रास्ते पर चला गया।





लगभग ढाई हजार वर्ष पहले भारत में सोलह बड़े-बड़े राज्य थे और कई छोटे-छोटे। उनमें कई गणतन्त्र थे। बड़े राज्यों में मुख्य थे, कोशल, मगध, विधेह।

लिच्छिवियों और शाक्यों ने अपने अपने गणतन्त्र स्थापित कर लिये थे। शाक्यों का राज्य हिमालय की तलहटी में था। उसका क्षेत्रफल करीब हजार मील था।

शाक्य कोशल के राजाओं के सामन्त थे। कपिलवस्तु नगरी उनकी राजधानी थी। शाक्यों का राज्य बहुत सुन्दर और समृद्ध था। उसके उत्तर में हिमालय के बर्फीले पर्वत थे। सारे राज्य में घने वन थे। मैदान में चावल की खूब फसल होती थी। किसी चीज़ की कमी न थी।

शाक्य क्षत्रिय थे। उनके राजा का नाम शुद्धोधन था। शाक्य यद्यपि कोशल के सामन्त थे, परन्तु बहुत स्वाभिमानी थे। किसी के सामने आसानी से सिर न झुकाते थे। एक कोशल राजा ने, किसी शाक्य कन्या को जब पत्नी बनाना चाहा तो शाक्यों ने आपस में सलाह मशवरा करके यह खबर भिजवाई कि कोशल राजा शाक्य कन्याओं से विवाह करने योग्य न थे। अपनी कन्या के बदले उन्होंने एक दासी को राजा के पास भेज दिया। कहने

का मतलब यह कि शाक्य बहुत स्वाभिमानी थे।

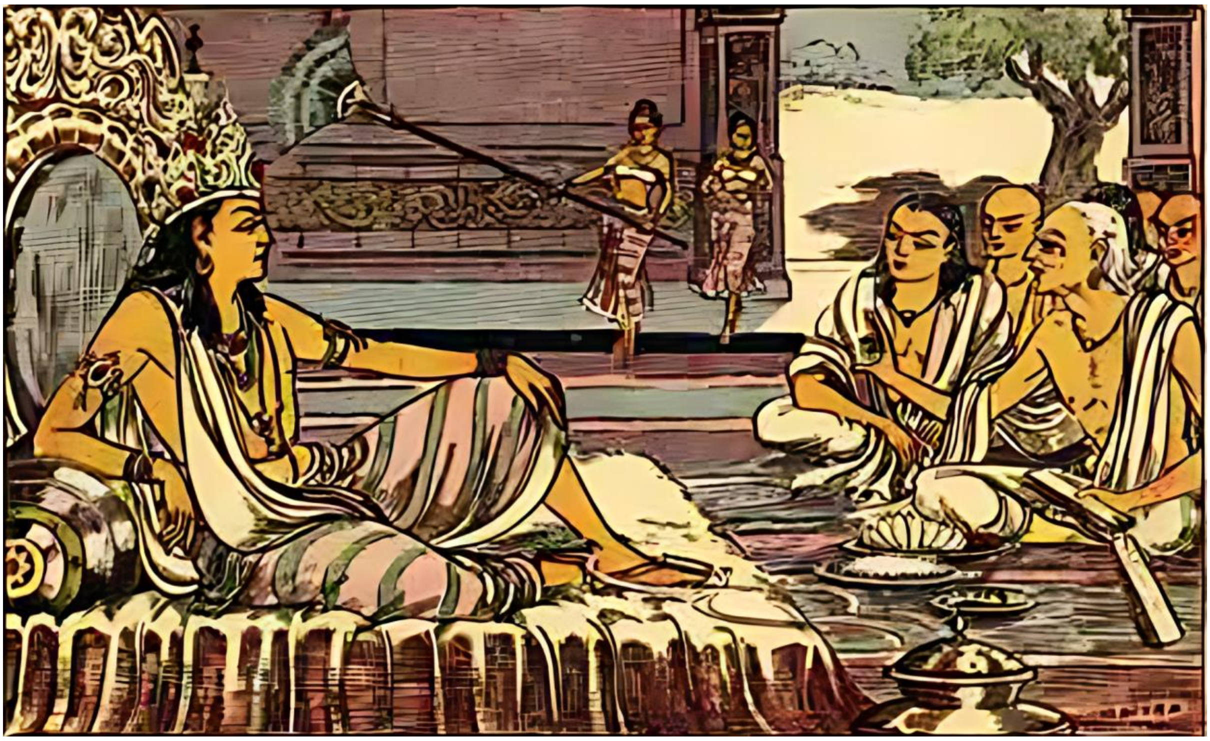
शाक्य राजा शुद्धोधन की बड़ी रानी का नाम था महामाया अथवा मायादेवी। उनकी दूसरी पत्नी का नाम था महाप्रजापति। वे दोनों व्याघ्रपुर राजा की पुत्रियाँ थीं। क्योंकि ज्योतिषियों ने बताया था कि उनके गर्भ से एक चक्रवर्ती या अवतार पुरुष पैदा होगा इसलिये जम्बू द्वीप के कई राजा उनसे विवाह करना चाहते थे। परन्तु उनके पिता ने राजा शुद्धोधन से ही उनका विवाह किया।

एक साल, कपिलवस्तु के निवासियों ने आषाढ़ सप्तमी से, सात दिन तक आषाढ़ोत्सव मनाये। सारे नगर को खूब शोभित किया गया। सात दिन, नृत्य आदि, मनोरञ्जन में गुजर गये। चतुर्दशी के दिन, यानि उत्सवों के आखिरी दिन गुलाब जल से स्नान करके, पुष्प माला आदि, पहनकर, दान-धर्म वगैरह करके मायादेवी जब सोई तो प्रातःकाल उनको एक स्वप्न आया। सपने में उन्होंने देखा कि आकाश से एक सफेद हाथी आया और दायीं ओर से उनके गर्भ में घुस गया।



सवेरे उठते ही मायादेवी ने शुद्धोधन से अपने सपने के बारे में कहा। उसी दिन चौसठ वेद पारङ्गत ब्राह्मणों को बुलाकर उनको सोने के थालों में उन्होंने भोजन परोसा और वे थाल उनको दे दिये। फिर उन्होंने मायादेवी के स्वप्न का अर्थ उनसे पूछा। "मायादेवी गर्भवती हो गई हैं। देश में आनन्दोत्सव करवाइये। उनके गर्भ से जो पैदा होगा, यदि उसने सांसारिक जीवन निभाया तो सम्राट होगा और यदि उसने सन्यास ले लिया तो वह महा-बुद्ध होगा।" ब्राह्मणों ने बताया।

दस मास पूरे होते ही मायादेवी ने अपने पति से कहा-"मैं मायकेवालों को देखना चाहती हूँ।" तुरन्त शुद्धोधन ने उनके जाने के लिए उचित व्यवस्था की, कपिलवस्तु से जो मार्ग व्याघ्रपुर जाता था, उसपर रेत डालकर उसको समतल करवाया गया। रास्ते में पानी आदि का इन्तजाम किया गया। सोने की पालकियों पर मोटे गद्दे बिछाये गये। मायादेवी स्नान करके अपने आभूषण पहनकर सुशोभित हो अप्सरा-सी चमचमाती पालकी में बैठी। पालकी को उठाने के लिए हजार उत्तम





क्षत्रिय पालकी के साथ गये। दासी और रथों के साथ मङ्गल वाद्यों के तुमुल घोष में मायादेवी मायके के लिये निकलीं।

व्याघ्रपुर के मार्ग में, कपिलबस्तु नगर के पूर्व में पन्द्रह मील की दूरी पर लुम्बनी बन था। वह वन प्रसिद्ध था। यहाँ टहलने के लिए दोनों नगरों के लोग आया करते थे। पालकी के, लुम्बनी वन में पहुँचते ही मायादेवी ने वहाँ थोड़ी देर विश्राम करना चाहा। यह वैशाख मास था। बसन्तकाल। बन के वृक्ष फूलों से लदे थे। सारा वन महक रहा था। पुष्पों का मधु पीते भौरें गुञ्जन कर रहे थे। पेड़ों पर बैठे तरह तरह के पक्षी मधुर गान कर रहे थे।

मायादेवी उस वन की शोभा निहारती चलने लगीं। वे एक शाल वृक्ष के पास गई थीं कि उनको प्रसव होता-सा लगा। उन्होंने किसी चीज को पकड़ना चाहा। तुरन्त उस शाल वृक्ष की शाखा उनके सहारे के लिए झुक गई। उसी समय प्रसव आरम्भ हो गया।

उनके साथ की परिचारिकाओं ने उनके चारों ओर परदे फैला दिये। मायादेवी ने पूर्व की ओर मुँह करके बिना किसी प्रसव वेदना के उस वन में एक लड़के को जन्म दिया।

उस दिन वैशाख पूर्णिमा, मङ्गलवार, और विशाल नक्षत्र था। उसी दिन कपिलवस्तु नगर में यशोधरा पैदा हुई। कण्टक नाम का घोड़ा पैदा हुआ। चेन्ना, आनन्द और कालादाया पैदा हुए। और गया के पास बोधि वृक्ष पैदा हुआ।

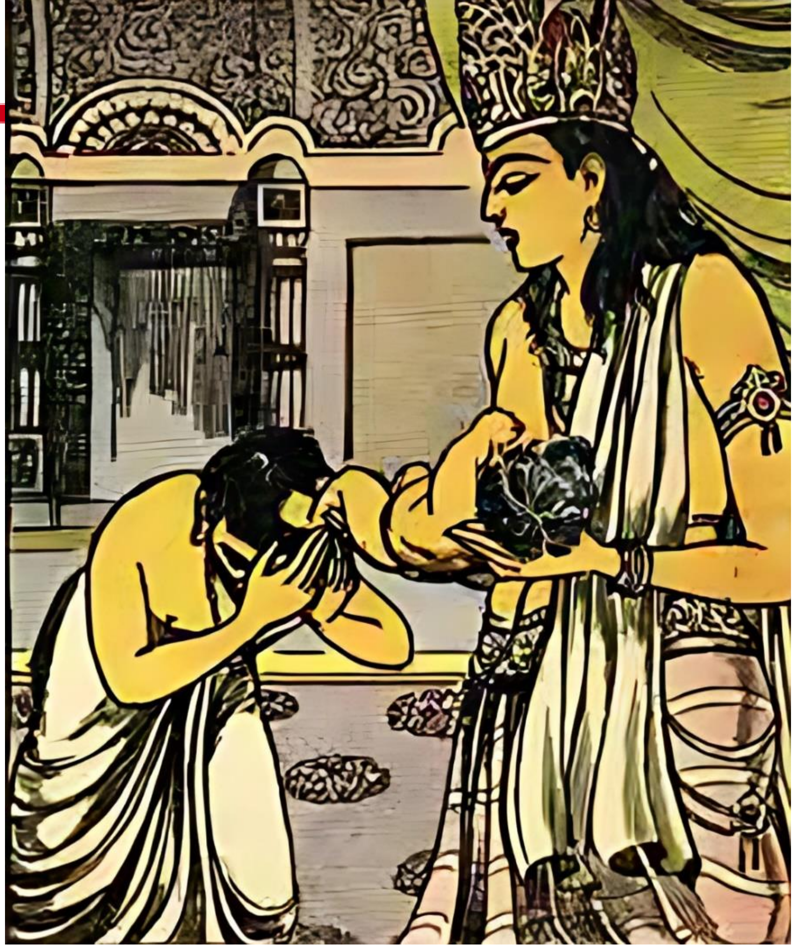
(इन सब का बुद्ध के जीवन से सम्बन्ध था। यशोधरा बुद्ध की पत्नी हुई। बुद्ध जिस दिन सन्यास लेकर घर से निकले

तो वह कण्टक पर ही सवार हो कर गये थे। तब बुद्ध के साथ चेन्ना गया था। आनन्द ने बुद्ध की आजीवन सेवा ने की। अपने सन्यासी पुत्र को बुलाने के लिये शुद्धोधन ने कालादाया को दूत बनाकर भेजा था। गया में, बोधि वृक्ष के नीचे ही बुद्ध ने बुद्धत्व पाया था।)

कहते हैं कि जिस दिन बुद्ध पैदा हुये उस दिन बहुत-सी आश्चर्यजनक चीजें देखने में आई।

क्योंकि मार्ग में ही प्रसव हो गया था इसलिये मायादेवी मायके न गई। अपने शिशु और नौकर चाकरों को लेकर वे कपिलवस्तु लौट आई।

हिमालय में असित नाम का मुनि तपस्या किया करता था। क्योंकि उसकी तपस्या कभी की सफल हो चुकी थी इसलिये, चाहने पर सब लोक, सुना जाता था, वह देख सकता था। बोधिसत्व के पैदा होते ही इन्द्रलोक में देवताओं के आनन्द उल्लास को देखकर उसने सोचा कि इन्द्र के पद के लिए कोई और आया होगा। उसकी उत्सुकता बढ़ी। पूछताछ करने पर मालूम हुआ कि शुद्धोधन के पुत्र पैदा हुआ था। और वह पैंतीस वर्ष बाद बुद्ध बनेगा।



तुरन्त असित कपिलवस्तु नगर गया। शुद्धोधन ने उसका भक्तिपूर्वक स्वागत किया। उसने अपने लड़के को उसके पैरों पर रखना चाहा।

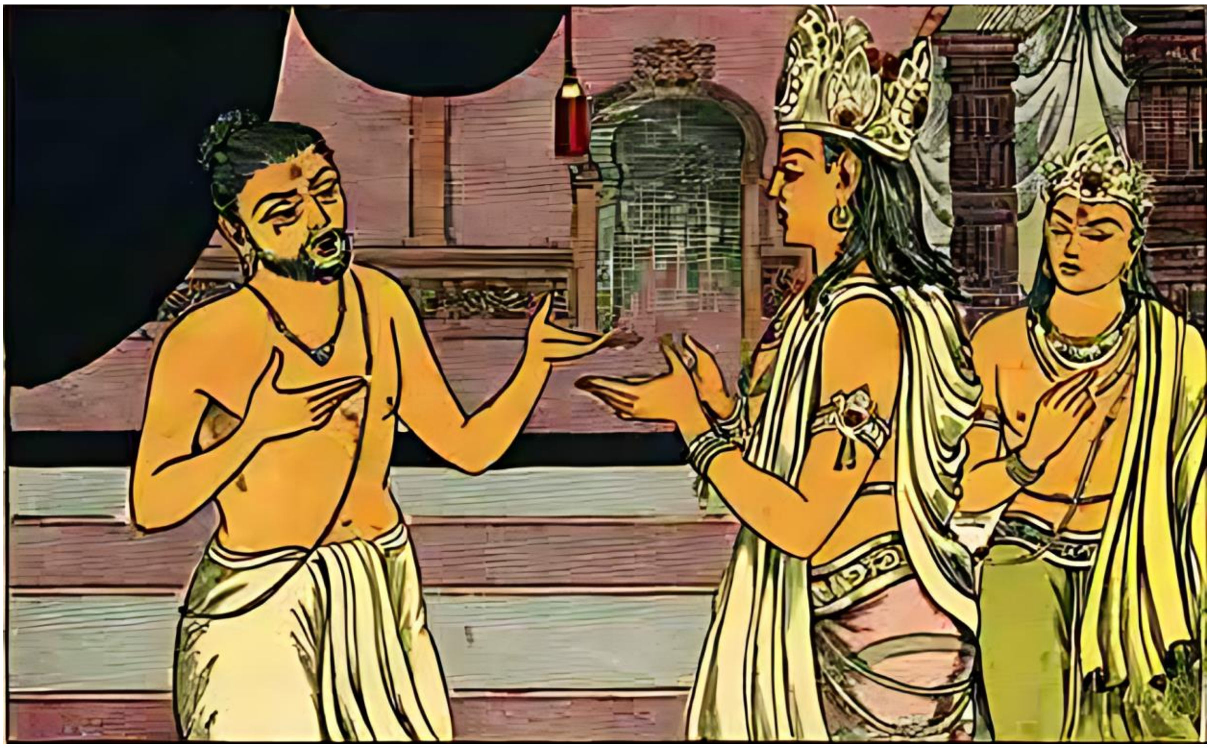
अगर उस शिशु ने उसके पैरों का छुआ तो उसका सिर सात टुकड़ों में फूट सकता था, यह सोचकर असित ने उसके पैर पकड़कर अपने माथे पर लगा लिया। फिर उसने उस शिशु के चारों ओर तीन बार प्रदक्षिणा की। यह सब देख स्वयं

शुद्धोधन ने अपने पुत्र के सामने साष्टाङ्ग किया। शुद्धोधन का बुद्ध के सामने यह पहिला प्रणाम था।

"राजा, मैं ब्रह्मा और इन्द्र को भी प्रणाम नहीं करता। मेरी आज्ञा पर सूर्य चन्द्र रुक जाते हैं। फिर भी मैंने तुम्हारे शिशु को प्रणाम किया है।" यह कहकर असित ने शिशु की परीक्षा की। उसमें बत्तीस माङ्गल्य लक्षण थे। यह जानते ही कि वह अवश्य बुद्ध होगा असित का मुँह आनन्द से खिल उठा। वह सन्तुष्ट हुआ।

फिर उसने भविष्य देखा। उसने अपना आनन्द स्पष्ट व्यक्त भी किया। उस शिशु के बुद्ध होकर उपदेश देने के समय वह मर चुका होगा। उसके उपदेश सुनना उसके भाग्य में न था। यह देख वह आँसू बहाने लगा। अपने को अभागा समझने लगा।

असित को पहले हँसते फिर आँसू बहाते देख शुद्धोधन आदि घबराये। उन्होंने पूछा-"स्वामी, आप क्यों आँसू बहा रहे हैं? क्या बच्चे पर कोई आपति आनेवाली है? बच्चा क्या चिरञ्जीवी नहीं होगा, स्वामी?"



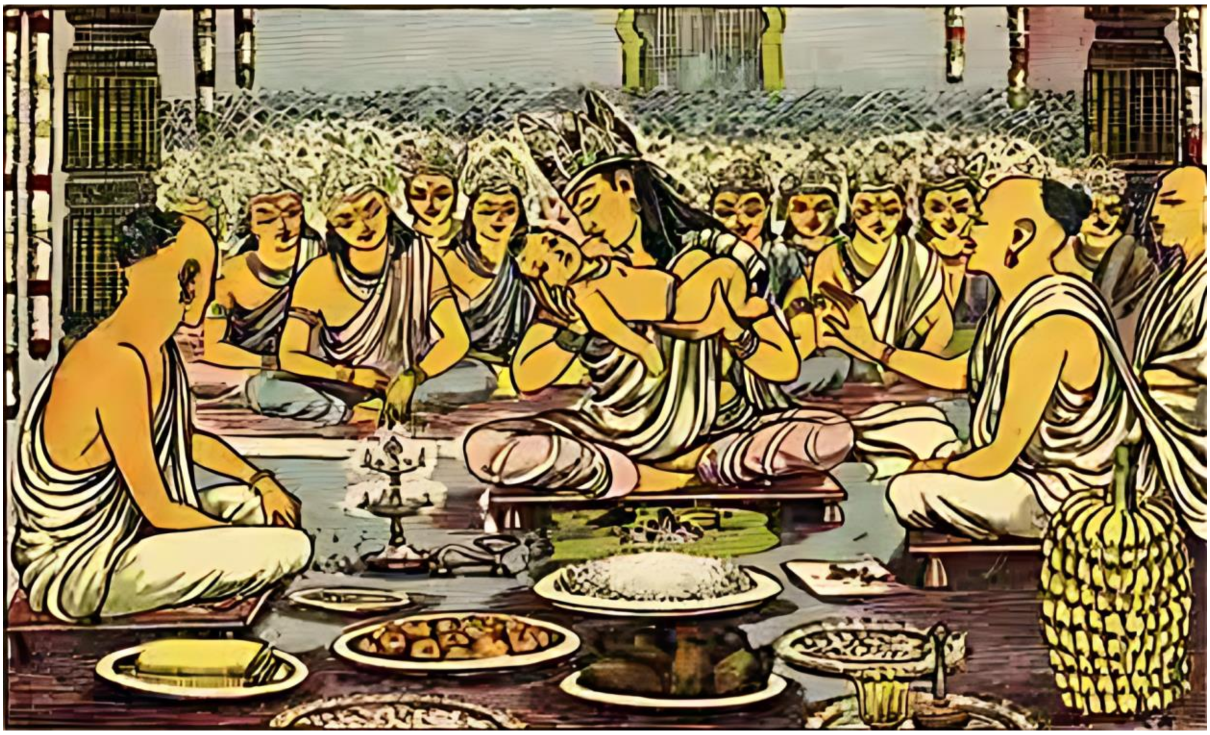
"नहीं, नहीं। इस बच्चे पर कोई आपत्ति न आयेगी। पैंतीस वर्ष के होने पर यह बुद्धत्व को प्राप्त कर मानव जाति को मुक्ति का उपदेश देगा। उन उपदेशों को सुनने के लिए, बुद्ध को अपनी आँखों से देखने के लिए मैं इस संसार में जीवित न रहूँगा।" यह सोच कर मैं शोक कर रहा हूँ।

फिर असित ने सोचा कि उसके लोगों में, किसको बुद्ध को देखने का भाग्य मिलेगा? उसे दिव्यदृष्टि से पता लगा कि उसके शिष्य के भाञ्जे नरदत्त को वह भाग्य मिलेगा।

उसने नरदत्त से कहा "बेटा, तुम तुरन्त सन्यास लेकर तपस्या प्रारम्भ करो। बुद्ध के उपदेश सुनकर मोक्ष पाने का तुम्हें अवसर मिलेगा।"

नरदत्त काषाय वस्त्र पहनकर सन्यास लेकर हिमालय में तपस्या करने लगा। असित ऋषि का कहना ठीक निकला। बुद्ध के उपदेशों को काशी में सुनने का भाग्य कालक्रम से उसको मिला।

बच्चे का पाँचवें दिन नामकरण संस्कार किया गया। वह उत्सव बड़े जोर शोर से मनाया गया, क्योंकि वह लड़का शुद्धोधन



का इकलौता था और बहुत दिन बाद पैदा हुआ था। सभी के लिए वह सन्तोष का कारण था। उस दिन शुद्धोधन ने एक सौ आठ ब्राह्मणों को भोजन देकर लड़के की जन्मपत्री जाननी चाही।

जन्मपत्री तैयार करने के लिए आठ ब्राह्मण निर्वाचित हुये। उनमें से सात ने कहा कि यह बच्चा सम्राट होगा नहीं तो बुद्ध। आठों में सबसे छोटे सुदत्त ने साफ़ साफ़ कहा- "यह कभी सम्राट न होगा। यह बुद्ध ही होगा।"

ब्राह्मणों ने मिलकर शुद्धोधन से कहा-"महाराज, इस शिशु के कारण संसार का बहुत कल्याण होगा। उसकी सब इच्छायें पूरी होंगी। इसलिये इसका नाम सिद्धार्थ रखिये।"

गौतम शाक्यों का वंश-नाम था। इसलिये शुद्धोधन का लड़का, गौतम, गौतम सिद्धार्थ व सर्वार्थसिद्ध नाम से संसार में जाना गया।

नामकरण उत्सव में अस्सी हजार शाक्य उपस्थित हुये। उन सब ने भी शुद्धोधन की तरह सोचा कि वह अवश्य सम्राट बनेगा। होनेवाले सम्राट को अनुयायी चाहिये थे। इसलिये उन सबने अपने लड़कों को बुद्ध के साथ विद्याभ्यास के लिए भेजने का निश्चय किया। सिद्धार्थ के जन्म के सातवें दिन बाद मायादेवी इस दुनियाँ से चली गई। शुद्धोधन ने अपने लड़के को दूध देने के लिए सौ दासियों को नियुक्त किया। कई हजार स्त्रियों को परख कर ये स्त्रियाँ चुनी गई थीं, ताकि वे न तो बहुत लम्बी हों, न नाटी हो और स्वस्थ हो।

(अभी है)





अरब के रेगिस्तान में बदानी नाम की एक जाति रहती है। उस जाति के लोग एक जगह नहीं बसते, रेगिस्तान में घूमते- फिरते हैं। बचपन में ही ये तलवार चलाना, भाला फेंकना, आदि सीख लेते हैं। हत्या करने का ज्ञान तो वे माँ के दूध के साथ पाते हैं। मरना मारना इन लोगों की परम्परा है। बदानी टोलियो में हरेक का अपना अपना नाम होता है, पर सब अपने को इस्माइल की सन्तान बताते हैं।

कई सदियों पहले "बेनीसाम" नाम की एक बदानी टोली थी। इस टोली का एक सरदार था। उसका नाम "मरुभूमि भयङ्कर" था। इसके आखिरी लड़के का नाम कनाना था। उन लोगों की रीति के अनुसार छोटा लड़का पिता की भेड़ें चराया करता था। इसलिए कनाना ने पाँच साल पूरे होते ही, स्त्रियों के साथ छाछ बनाना, मक्खन बनाना आदि काम सीखे। दस वर्ष स्वतम होते ही लठिया लेकर वह भेड़ों और ऊँटों को चराने लगा।

इस तरह तीन साल के बीत जाने पर पिता ने कनाना से पूछा-"क्या भाला पकड़ना सीखोगे?"

"पिताजी! मैं सिवाय अल्लाह और अरेविया के लिए भाला हाथ में लेकर दूसरों का प्राण न ले सकूँगा।" कनाना ने कहा। उस जाति में मरने-मारने के सिवाय कोई कुछ नहीं जानता था। इस लड़के में यह अजीब ख्याल कैसे आया था, यह कोई अनुमान न कर सका।

"क्या तू अरब नहीं है? क्या तू इस्माइल की सन्तान नहीं है?" पिता ने



पूछा। परन्तु कनाना को यह तर्क न जँचा । यह जानता था कि अल्लाह सबकी सृष्टि करता है। और वह सारी सृष्टि का संरक्षक है। अगर उसने किसी जन्तु पर हिंसा की तो अल्लाह उसे माफ न करेंगे। उस हालत में, पशुओं से उच्चतर मनुष्यों को मारना गलती नहीं है क्या?"

कनाना को सब नीची दृष्टि से देखने लगे। टोली का यह ख्याल था कि वह निरा डरपोक था। वे उसे इधर-उधर के काम सौंपने लगे। कनाना को यह पसन्द न था।

यद्यपि उसने अस्त्र पकड़ने से इनकार कर दिया था, तो भी उसमें कुछ शक्तियाँ थीं। वह आसानी से जन्तुओं को वश में कर लेता। बेनीसाम टोली में उसके बराबर घोड़े पर, या ऊँट पर सवारी करनेवाला कोई न था। सब खेलों में वह अव्वल था। उसकी नज़र भी बहुत तेज थी। अगर रात को कोई भेड चुराने आता, तो और लड़कों की अपेक्षा उसको यह जल्दी मालूम हो जाता। वह जितनी दूर पत्थर फेंक सकता था, उतनी दूर और कोई नहीं फेंक पाता था। ये सब योद्धाओं के लक्षण थे। इन गुणों के बाबजूद भी, अपने लड़के को, योद्धा न बनते देख बूढ़ा पिता चिन्तित रहा करता।

रेगिस्तान के सिरे पर, एक नदी के किनारे बेनिसाम टोली साल में तीन महीने रहा करती थी। वे वहाँ बीज बोते और फसल काट कर चले जाते। काले कम्बल के लगभग पाँच सौ हेरे चारों ओर गढ़े रहते। डेरों के इधर-उधर नदी के किनारे उनके खेत थे। जब फसल पकती तो, खेतों में मचान बना कर, स्त्री, बूढ़े, बच्चे, उन पर रहते, और पशु-पक्षियों से फसल

की रक्षा करते। फसल कटने तक इस तरह उनका पहरा रहता।

इस साल कनाना को किनारे के एक मचान में रखा गया। उसका इस प्रकार अपमान होना ही चाहिए था, सब ने कहा। वह यह न जानता था कि टोली में कैसे आदर पाया जाता था, या बहादुरी कैसे दिखाई जाती थी। सब के डरपोक कहने से तो अच्छा यही था कि वह कहीं दूर पड़ा रहे।



कुल फसल कटनेवाली थी कि कनाना के पिता को एक दुखद समाचार मिला। उसके दो लड़के, चार ऊँटों पर शहद, ईन्धन, मिट्टी लेकर एक काफले के साथ गये। रास्ते में उनको एक और टोली ने लूट लिया। उन डाकुओं की टोली का सरदार रशीद था। रशीद की टोली में, और बेनीसाम टोली में शत्रुता थी। इसलिए उसने कनाना के दोनों भाईयों और चार ऊँटों को पकड़ लिया। बड़ा भाई तो बन्दी बना लिया गया, पर दूसरा भाई घायल होकर, उनके फन्दे से छूटकर घर पहुँचा।

यह सुनकर गुस्से में, "मरुभूमि भयङ्कर" कनाना की जगह पर आया। कनाना मचान पर ध्यानमग्न सा बैठा था। पक्षी फसल खा रहे थे, जो दोपहर को उसके लिए खाना भेजा गया गया था, वह भी उसने न छुआ था। यह सब देख, बूढ़ा और भी खौल उठा।

"अरे, अभागे। तू तो हमारे खानदान में गलती से पैदा हुआ है। तुम्हें खेत में पहरे पर रखा, और तुम पक्षी भी नहीं भगा पाते हो? न तू मर्दों का काम कर पाता है, न औरतो के ही। किस काम

आओगे? क्या करूँ? कितने कष्ट हैं?" उसने लड़के को डाँटा डपटा।

"पिता जी! आप पर क्या कष्ट पड़े हैं?" कनाना ने पूछा।

"जो सब जानते हैं वह भी तू नहीं जानता?" पिता ने पूछा।

"तीन सप्ताह से इस मचान पर से नहीं उतरा हूँ। मुझसे कोई बात नहीं करता, कोई कुछ नहीं बताता।" कनाना ने कहा।

पिता ने कनाना से रशीद की करतूत के बारे में कहा। सच पूछा जाय, तो बूढ़े को बहुत नुकसान नहीं हुआ था। काफिले के जो ऊँट रसीद के हाथों में फँस गए थे, उनमें से तीन तो बूढ़े थे, एक सफेद ऊँट ही अच्छा था। उन पर लदा माल भी कोई खास कीमती न था। फिर भी कनाना को लगा कि उस सफेद ऊँट, और अपने बड़े भाई को छुड़ाना उसका घर्म था।

"पिता जी, मुझे एक घोड़ा, अनाज का थैला, पानी की मशक दोजिये, रशीद का पीछा करूँगा। मैं उसे मारूँगा तो नहीं पर भाई और सफेद



ऊँट को छुड़ा लाऊँगा।" कनाना ने कहा।

"जा वे जा! ऊँघ मत! अन्धेरा होने तक पक्षी भगा। यही काफी है। कल सबेरे फसल कटनी शुरू होगी।" पिता ने कहा।

"अन्धेरा होने तक मैं पक्षी भगाऊँगा। पर मैं फसल काटने के लिए यहाँ न होऊँगा। सवेरा होते होते मैं भाई के लिए बहुत दूर जा चुका हूँगा।" कनाना ने कहा।

"मैं तेरा विश्वास कर तुझे घोड़ा न दूँगा।" पिता ने कहा।

"कोई बात नहीं, मैं पैदल ही चला जाऊँगा। मुझे आशीर्वाद दीजिये।" कनाना ने कहा।

"पहले जीतकर आ, तब आशीर्वाद दूँगा।" पिता ने कहा।

* * * *

सूर्यास्त हो ही रहा था कि कनाना मचान से उतरा। खेत से थैला भरके अनाज लेकर, उसे कन्धे पर डाल, एक लठिया ले, रेगिस्तान में पश्चिमोत्तर दिशा की ओर वह चल पड़ा। रशीद के हथकण्डों के बारे में कनाना अधिक न जानता था। उसने जिस काफिले





को लूटा था, वह कुछ दिन पहले मक्का की ओर गया था। सुना गया कि रशीद, उस टोली को लूटकर डमास्कस की ओर गया था। रेगिस्तान के बीच में होर नाम का पहाड़ था, उसकी चोटी पर खड़े होने से चारों ओर का रेगिस्तान दिखाई देता था। रशीद के उस पहाड़ के पार करने से पहले वह वहाँ नहीं पहुँच सकता था। परन्तु कनाना को यह उम्मीद थी कि उस पहाड़ पर खड़े होकर रशीद की टोली देखी जा सकती थी; क्योंकि उसकी नज़र बहुत तेज थी ही।

अरेबिया से, उत्तर की ओर जेरुसलम, डमास्कस जानेवाले काफिले, सीरिया से मक्का और मदीने की ओर आनेवाले काफिले वहीं पड़ाब करते थे। अगर कोई सामने से काफिला आया तो उससे रशीद की टोली के बारे में मालूम किया जा सकता था, यह सोच कनाना होर पहाड़ की ओर चला।

कनाना को यह डर न था कि वह. रास्ते से भटक जायेगा। दिन में सूर्य को देख कर, रात में तारे देखकर बदानी, आसानी से रेगिस्तान में कहीं भी जा सकते थे। कनाना रात भर चलता रहा, अगले दिन जब धूप कड़ी हुई तो एक पत्थर के नीचे सो गया। वह दो दिन पैदल चला। दूसरे दिन सूर्यास्त के समय उसने कुछ दूरी पर होर पहाड़ देखा। उस पहाड़ पर एक छोटा-सा नाला था। नाले में पानी पीकर वह उसके किनारे ही सो गया।

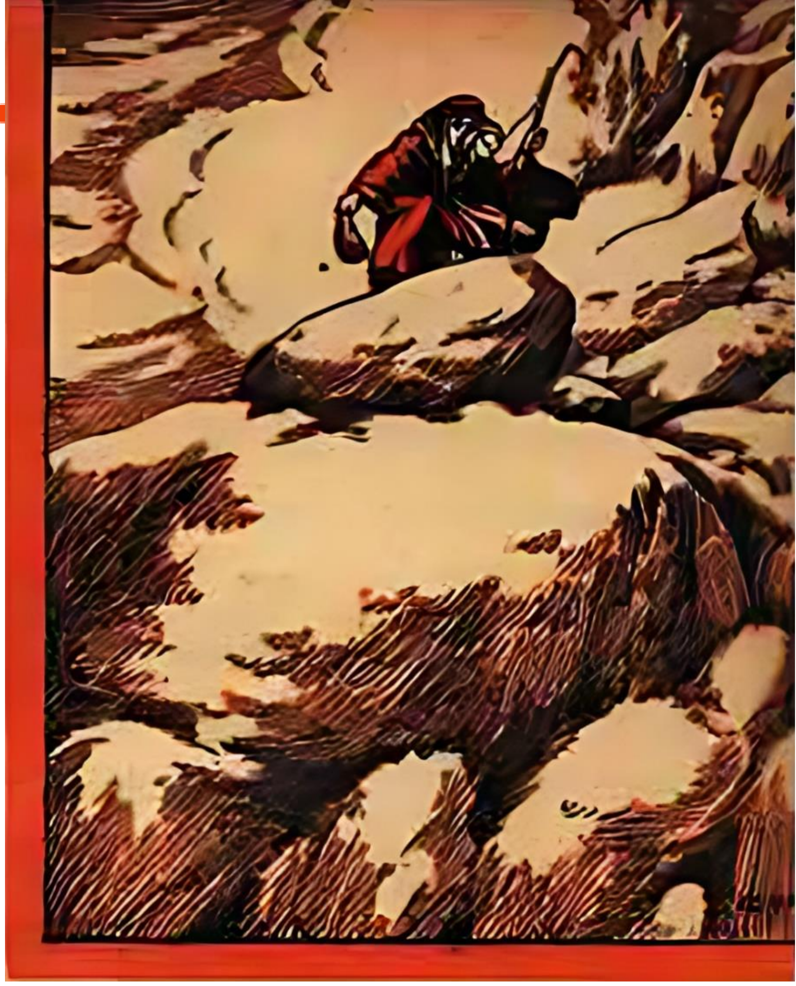
सवेरे, सूर्योदय के समय उठकर उसने चारों ओर देखा उसे वहीं कई ऐसी चीजें दिखाई दीं, जिनसे यह अनुमान किया जा सकता था कि आधा दिन पहले ही

कोई काफिला वहाँ पड़ाव करके मक्का मदीने की ओर गया था। उसे विश्वास हो गया कि उस काफिले के साथ उसका भाई था। उसे यह सोच आनन्द भी हुआ। शायद उस काफले के बारे में कुछ मालूम हो सके, यह सोचकर वह पहाड़ की चोटी पर चढ़ा। पर उसे कुछ न मालूम हो सका। इतने में सूर्य पूरी तरह उदय हो गया। उसने सवेरे की नमाज़ पढ़ी और अल्लाह से प्रार्थना की कि वह उसको अपने काम में कामयाबी दे।

*   *   *   *

कनाना पहाड़ पर चढ़ रहा था। ठीक उसी समय पहाड़ के नीचे पाँच छः अरबी सैनिक घोड़ों पर सवार होकर आये। वे अरेबिया के उत्तर प्रान्त से आ रहे थे। वे बहुत तेजी से आये थे। वे सैनिक घोड़ों से उतर पड़े। कुछ खाकर अपने घोड़ों की रस्सियों को अपने शरीर से बाँधकर, घास पर सो गये।

थोड़ी देर बाद तीन बदानी चोर उस तरफ आये। उन्होंने घोड़े चुराने



चाहे। परन्तु मालिकों को बिना मारे घोड़े नहीं मिल सकते थे। उन्होंने उन पाँच छः सैनिकों को मारा। उनके कपड़े और हथियार छीन लिए। फिर घोड़े लिए। तीन पर तो वे सवार होकर निकले, और दो को चलाते चले गये।

जब चोर सैनिकों को मार रहे थे, तब उनका चिल्लाना सुन, कनाना काँप गया था। वह जान गया कि कोई भयङ्कर घटना हो गई थी। उसने नीचे आकर जो देखा तो उसका सिर चकरा गया। वह खुन न देख सका। सिर मोड़कर जा ही रहा

था कि उसको एक सैनिक का कराहना सुनाई दिया। कताना हिम्मत करके उस कराहते सैनिक के पास गया। "घास, घास" उस सैनिक ने कहा।

कनाना ने अपनी मशक से उस सैनिक को, जिसमें बची खुची जान कहीं अटकी पड़ी थी, पानी पिलाया। सैनिक ने आँखें

खोलकर कनाना को देखकर कहा- "बेटा, अभी तो तुम्हारे दाढ़ी मूँछें नहीं आई हैं। पर तुम अरब हो। अरबों का नाश करने के लिए, हिरोक्लिस सम्राट का लड़का, कोन्स्टेन्टीन, टर्क, ग्रीक, रोमन सैनिकों को लेकर आ रहा है। यह बात खलीफा से कहकर हम उनकी सहायता माँगने के लिए एक चिठ्ठी ले जा रहे हैं। इस समय खलीफा मक्का में हैं। क्या यह चिट्ठी उनको पहुँचा दोगे? अल्लाह की कसम।" उसने कहा।

"अल्लाह की कसम! जरूर पहुँचा दूँगा।" बिना हिचके कनाना ने कहा।

सैनिक ने एक चिट्ठी निकालकर उसे दी। उसके बाद सैनिक ने प्राण छोड़ दिये।

जिस काम पर निकला था, उस काम को छोड़कर सैनिक को इस प्रकार वचन देकर, कनाना स्वयं अचरज कर रहा था। यह उसके लिए एक परीक्षा है, अल्लाह की शपथ करके, बह इसे करने के लिए मान गया था।

इस बीच उसे एक और बात याद आ गई कि जिस काफले का वह पीछा कर रहा था वह दक्षिण की ओर जा रहा था। मक्का, उसी तरफ था। इसलिए सैनिक को दिये हुए वचन को निभाने के लिए, यह जरूरी न था कि वह रास्ता छोड़कर जाये।

(अभी और है)



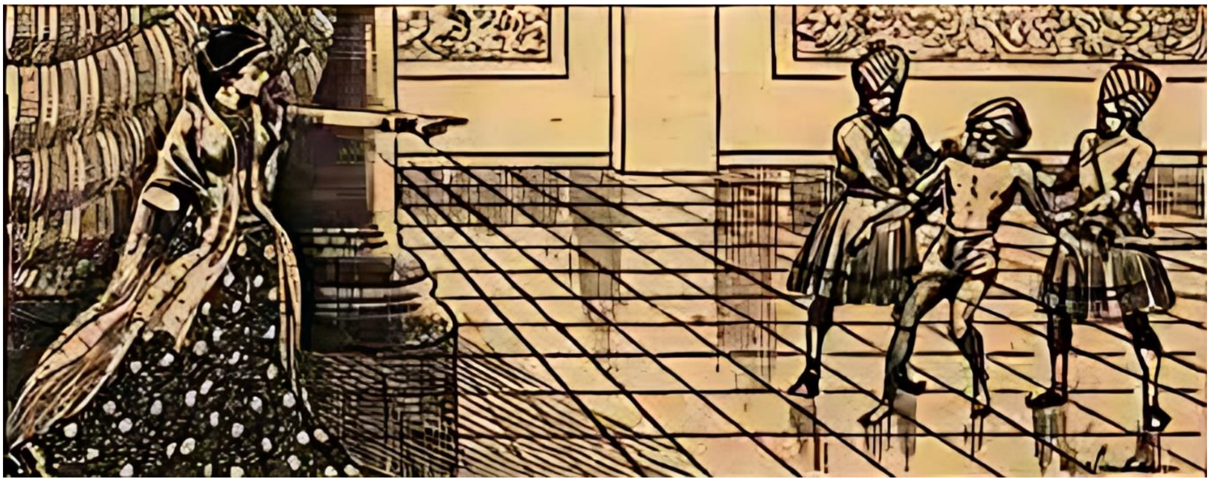
अविवेकी

काशी के बाहर एक बूढ़ा गड़रिया रहा करता था। वह अपने भेड़ों को चरने छोड़ देता और पेड़ के नीचे बैठकर बाँसुरी पर तान छेड़ता। एक दिन एक अप्सरा उसके सङ्गीत पर मुग्ध होकर उसके सामने प्रत्यक्ष हुई। उसने उस बूढ़े को अपनी महिमा द्वारा एक गन्धर्व कुमार के रूप में बदल दिया-"तुम हमारे लोक में आकर हमेशा मुझे बाँसुरी सुनाया करो।"

युवक होकर देवताओं के वस्त्र पहनकर गड़रिये ने अप्सरा से कहा-"अच्छा आऊँगा, पर मुझे थोड़ा समय दो ताकि मैं शहर जाकर अपने दोस्तों से कह आऊँ।" अप्सरा मान गई। उसको सफेद घोड़ों से जुते, सोने का रथ उसने दिया। वह जब उस पर चढ़कर शहर में से जा रहा था तो महल से राजकुमारी ने उसे देखकर अपने नौकरों से कहा-" उस रथ में जानेवाले युवक से कहो कि मैं बुला रही हूँ।"

जब उसे मालूम हुआ कि राजकुमारी उसे बुला रही है तो उसे लगा कि वह उससे प्रेम कर रही है। उसने जाकर राजकुमारी को प्रणाम किया-"देवी, मुझसे तुरत शादी कर लो। मैं तुम्हारा पति होकर काशी पर राज्य करूँगा।"

तुरन्त पहले के रूप में वह आ गया। "कौन है, यह बूढ़ा खूसट! इसे तुरन्त गली में धकेल दो।" राजकुमारी ने कहा।



CHANDAMAMA (Hindi) FEBRUARY 1959 Regd. No. M. 5452



बुद्ध चरित्र